तीन सौ गीत

(नये पुराने कवियों के काव्य का प्रतिनिधि संकलन)

•

सम्पादक :
मलखान सिंह सिसौदिया
प्रिंसिपल
अ० स० आर्य इण्टर कॉलेज

•

सर्वाधिक लोकप्रिय कवि
डॉ० हरिवंशराय 'बच्चन'
को
उनकी ६०वी वर्ष गाँठ के अवसर
सादर
स म र्पि त

अनुक्रमणि

१. अंगराज
२. अंचल १७
३. अटल चतुर्वेदी १८
४. अनुपम कुमार १९
५. अमरसिंह 'मस्त' २०
६. अवधेश कुमार श्रीवास्तव २१
७. अवधेश नारायण मिश्र 'दीपक' २२
८. अमरनाथ आशुतोष २३
९. अशोक 'वीरेश' २४
१०. अशोक जैन 'रश्मि' २४
११. अशोक शर्मा 'निजेश' २५
१२. आशारानी व्होरा २५
१३. आलोक धन्वा २६
१४. श्रीमती इन्दु सिन्हा २७
१५. उपेन्द्रनाथ 'अश्क' २७
१६. उर्मिला निरखे २८
१७. उत्तमचन्द जैन 'प्रेमी' २८
१८. उमाकान्त दीप २९
१९. उमाकान्त वर्मा ३०
२०. उमाशंकर वर्मा ३०
२१. उमाशंकर शुक्ल 'उमेश' ३१
२२. एन० चन्द्र शेखरन नायर ३२
२३. ओमकुमार ३४
२४. ओमप्रकाश 'हेमकार'
२५. कृष्णचन्द्र वत्स
२६. कृष्णदत्त ओझा
२७. कृष्णबिहारी लाल
२८. कृष्ण भारद्वाज 'शरद'
२९. ओमानन्द सारस्वत
३०. कृष्णनन्दन 'पीयूष'
३१. कृष्णानन्द व्यास 'वैभास' ४१
३२. कृपानन्दसिंह ४२
३३. कपिलेश्वर झा 'कमल' ४३
३४. कमलाजैन 'जीजी' ४४
३५. कमलापति शास्त्री ४५
३६. कल्याणप्रसाद 'नीरव' ४५
३७. कान्ता ४६
३८. कान्ति बोरा ४७
३९. कुन्दनसिंह तवर 'सजल' ४८
४०. कुमार रस्तोगी ४९
४१. कुँवर बहादुर सक्सेना ५०
४२. केदारनाथ 'कोमल' ५१
४३. कार्तिकनाथ ठाकुर ५१
४४. के० के० शर्मा ५२
४५. केदारनाथ उपाध्याय ५३
४६. के० सी० भारती ५४
४७. केशवदेव शास्त्री 'केशव' ५५
४८. केशवप्रसाद व्यास ५६

४९. कैलाश श्रीवास्तव ५७
५०. गणेश खरे ५८
५१. गिरिराज शरण अग्रवाल ५९
५२. गिरीश के० सुमन ६०
५३. गिरीश श्रीवास्तव 'गिर्जेश ६१
५४. गुलाबसिंह प्रतिहार ६२
५५. गोपाल चतुर्वेदी ६३
५६. गोपाललाल सिजुआर ६४
५७. गोपीकृष्ण 'गोपेश' ६५
५८. गोवर्द्धनप्रसाद 'गवेषी' ६६
५९. गोविन्द दीक्षित 'अचल' ६७
६०. गौरीशंकर सचान ६८
६१. चक्रधर शर्मा ६९
६२. चन्द्र भूषण ७०
६३. चन्द्रमोहन 'हिमकर' ७१
६४. चन्द्रसेन विराट ७२
६५. चन्द्रेश 'शोला' ७३
६६. चतुर्भुजसिंह 'भ्रमर' ७३
६७. चाँदमल अग्रवाल 'चन्द्र' ७४
६८. मुरली मनोहर ७५
६९. छन्दराज ७५
७०. चम्पालाल सिंघई 'पुरन्दर' ७६
७१. छविनाथ मिश्र ७६
७२. जगदीश सक्सेना ७७
७३. ज्योतिप्रकास सक्सेना ७७
७४. जगत प्रकाश माथुर ७८
७५. जयगोविन्द सहाय ७९
७६. जनार्दन राय ७९
७७. जयप्रकाश यादव ८०
७८. जवाहर चौरसिया 'तरुण' ८१
७९. जय-जयराम शर्मा 'व्याकुल' ८२
८०. जसविन्द्र 'अशान्त' ८३
८१. जानकीवल्लभ शास्त्री ८४
८२. जितेन्द्र कुमार 'जिन्नु' ८५
८३. जितेन्द्रप्रसाद सिंह ८६
८४. जीवन प्रकाश जोशी ८६
८५. जीवन्ती विष्ट ८७
८६. जुगलमोहन दीक्षित ८८
८७. ठाकुरप्रसाद सिंह ८८
८८. तपेश चतुर्वेदी ८९
८९. तिलक ९०
९०. तीर्थराज झा ९१
९१. धम्मनसिंह 'सरस' ९२
९२. द्वारिकाप्रसाद त्रिपाठी ९३
९३. दयाशंकर दुबे ९४
९४. दामोदर स्वरूप 'विद्रोही' ९[illegible]
९५. दिनेशचन्द्र 'अरुण' ९[illegible]
९६. दीप्ति खण्डेलवाल ९[illegible]
९७. दुर्गा प्रसाद 'दुर्गेश' ९[illegible]
९८. देवकी साजन ९[illegible]
९९. देवीप्रसाद 'राही' १[illegible]
१००. देवीप्रसाद वर्मा 'बच्चू' १[illegible]

१०१. ध्वंशावशेष त्रिपाठी १०२
१०२. धर्मवीर भारती १०३
१०३. नन्दकिशोर कावरा 'किशोर' १०४
१०४. नरेन्द्र १०५
१०५. नरेन्द्र शर्मा १०६
१०६. ना० सु० रा० गणते १०७
१०७. नित्यानन्द तिवारी १०७
१०८. निर्मल 'मिलिन्द' १०८
१०९. निरंजन १०९
११०. निरंकारदेव 'सेवक' ११०
१११. निशाकर त्रिपाठी १११
११२. नीरज ११२
११३. नीलिमा कृष्ण ११३
११४. प्रभात जैन ११४
११५. प्रहलाद राजवेदी 'राकेश' ११४
११६. प्रभुनारायण श्रीवास्तव ११४
११७. प्रवीण नायक ११५
११८. परमानन्द श्रीवास्तव ११६
११९. प्राण सुल्लर ११६
१२०. पी० आर० रु० 'अमर' ११७
१२१. परशुराम 'विरही' ११७
१२२. प्रेमबहादुर 'प्रेमी' ११८
१२३. प्रेमशंकर 'आलोक' ११८
१२४ प्रेमशरण शर्मा ११९
१२५. पंकज १२०
१२६. प्रेमी 'अयूब' १२१
१२७. पाण्डेय 'आशुतोष' १२२
१२८. पुष्पलता 'नीलिमा' १२३
१२९. पौद्दार रामावतार 'अरुण' १२४
१३०. ब्रह्मानन्द भारद्वाज राज' १२४
१३१ ब्रजराज दीक्षित 'मधु' १२५
१३२. बृह्मसिंह भदौरिया 'दीपक' १२६
१३३. बेचन शर्मा 'उग्र' १२७
१३४ बलराज जोशी १२७
१३५ बलराम दत्त शर्मा १२८
१३६. बलबीरसिंह 'करुण' १२९
१३७. बंशी लाल पारस १२९
१३८. बलबीर सिंह 'रंग' १३०
१३९. बशीर अहमद मयूख १३०
१४०. बालकवि बैरागी १३१
१४१. बाबूलाल मधुकर' १३२
१४२. बुधमल शामसुखा १३२
१४३ डा० बेचन १३२
१४४. बाबूलाल दुबे 'निपग' १३३
१४५. मगन अवस्थी १३४
१४६. मूलचन्द राठौर १३४
१४७. मदन मोहन 'उपेन्द्र' १३५
१४८. मदन मोहन चांडक १३६
१४९. मदनमोहन 'तरुण' १३७
१५०. मदनमोहन जवालिया १३७
१५१. मदनमोहन श्रीवास्तव १३८

१५२. 'विरक्त' १३८
१५३. मधुकर अष्ठाना १३९
१५४. ममता अग्रवाल १३९
१५५. 'मधुप' पाण्डेय १४०
१५६. मधुकर सिंह १४०
१५७. मधुमालती चौकसी १४१
१५८. मनोहर शर्मा 'रिपु' १४२
१५९. मखखान सिंह सिसौदिया १४३
१६०. महेशचन्द 'सरल' १४४
१६१. महेन्द्र भटनागर १४५
१६२. महावीर प्रसाद सिंह 'माधव' १४५
१६३. महेश्वर प्रसाद सिंह १४६
१६४. महेशचन्द्र शर्मा वैद्य १४७
१६५. माखन लाल चतुर्वेदी १४८
१६६. महेश जायसवाल १४९
१६७. माधव सिंह 'दीपक' १४९
१६८. मुक्तिनाथ त्रिपाठी १५०
१६९. मुरलीधर दीक्षित 'शेखर' १५१
१७०. भागवत पाण्डेय सुधांशु' १५१
१७१. भगवतीचरण 'निर्मोही' १५२
१७२. भारत भूपण १५३
१७३. भोलानन्द मिश्र 'अमरेन्द्र' १५४
१७४. योगी नर्मदेश्वर पाण्डेय १५५
१७५. यदुनाथ पाण्डेय 'अश्रु' १५५
१७६. योगेन्द्र तुली 'अम्बुद' १५६
१७७. रघुनाथ प्रसाद 'घोष' १५७
१७८. रघुनाथप्रसाद 'विकल' १५८
१७९. रघुनाथ प्रियदर्शी १५८
१८०. रघुवीर शर्मा १५९
१८१. रघुवीर सिन्हा १५९
१८२. रणधीर सिन्हा १६०
१८३. रफत अधीर १६१
१८४. रमन शर्मा १६२
१८५. रमाकान्त श्रीवास्तव १६३
१८६. रमानाथ त्रिपाठी १६३
१८७. रमेशकुमार 'अनजान' १६४
१८८. योगेश चौबे १६५
१८९. रमेश मालवीय १६६
१९०. रमेश जोशी मृदुल, १६६
१९१. रमेश स्वर्ण 'अम्बर' १६
१९२. रमेशचन्द गुप्त १६
१९३. रवीन्द्र 'पापी' १६
१९४. रामकुमार शर्मा १६
१९५. राजकुमार पाण्डेय १
१९६. राजमल पवैया १
१९७. राजपूत अचल १
१९८. राजकुमारी अग्निहोत्री
१९९. राजेन्द्र 'अनल'
२००. राजेन्द्र 'काजल'
२०१. राजेन्द्र 'च्यवन'
२०२. राजेन्द्र 'निशेश'
२०३. राजेन्द्र स्नेह

२०४. राजेन्द्रसिंह चौहान १७६
२०५. राजेश्वर मिश्र 'रत्न' १७७
२०६. राजेन्द्र प्रसाद त्रिवेदी १७७
२०७. राजेशदयाल 'राजेश' १७८
२०८. राधाकृष्ण गुप्त 'चेतन' १७८
२०९. राधेश्याम द्विवेदी १७९
२१०. राधेश्याम 'मुक्त' १७९
२११. राधेश्याम शर्मा 'नीरद' १८०
२१२ रामकृष्ण पालीवाल १८०
२१३. रामगोपाल परदेसी १८१
२१४. रामगोपाल मिश्र १८२
२१५. रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' १८३
२१६ रामचन्द्र वर्मा १८४
२१७. रामदेव झा १८५
२१८. रामधारीसिंह 'दिनकर' १८५
२१९. रामनरेश भदौरिया १८६
२२०. रामनिरंजन परिमलेन्दु १८६
२२१. रामनिवास शर्मा 'मयंक' १८७
२२२. रामबाबू सेंगर पथिक १८८
२२३. रामवचन द्विवेदी 'अरविन्द' १८९
२२४. रामविशाल शर्मा 'विशाल' १८९
२२५ रामस्वरूप खरे १९०
२२६. रामसकल ठाकुर 'विद्यार्थी' १९१
२२७. रामसेवक शर्मा १९२
२२८. रामेश्वरी माहेश्वरी १९३
२२९. रामेश्वर प्रसाद सिंह १९४
२३०. रूद्रदत्त दुबे 'करुण' १९४
२३१. लल्लन चौधरी १९५
२३२. लक्ष्मीनारायण गोयल 'निराश' १९५
२३३. लक्ष्मीनारायण चौरसिया १९६
२३४. लक्ष्मीप्रसाद मिस्त्री 'रमा' १९७
२३५. वंशीधर प्रसाद वर्मा 'सुधाकर' १९८
२३६ व्रजनन्दन पाठक 'प्राणेश' १९८
२३७. वसंत १९८
२३८. विजय कुलश्रेष्ठ १९९
२३९. विनोदकुमार भारद्वाज २००
२४०. कु० विजया गहवे २०१
२४१. विजेन्द्र नारायण सिंह २०२
२४२. विद्याभास्कर वाजपेयी २०२
२४३ विद्याभूषण मिश्र 'मयंक' २०३
२४४ विनोदकुमार सिन्हा २०४
२४५. विमलेन्द्र कुमार 'शलभ' २०५
२४६. विश्वदेव शर्मा २०६
२४७ विश्वमोहन गुप्त 'भारती' २०७

२४८. विश्वदेव त्रिगुणायत २०८
२४९. वीणा, जे० बी० मिश्र २०८
२५०. श्यामलाकान्त वर्मा २०९
२५१. श्यामसुन्दर 'बादल' २१०
२५२. श्यामलाल 'शुभंकर' २११
२५३. शंकर 'क्रन्दन' २१२
२५४. शंकर प्रसाद त्रिपाठी २१३
२५५. शम्भुदयाल श्रीवास्तव 'ब्रजेश' २१३
२५६. शम्भूनाथ 'श्रीवसंत' २१४
२५७. शलभ २१४
२५८. शत्रुघ्न २१५
२५९. शान्तिस्वरूप 'अलिमस्ति' २१५
२६०. शिवउपाध्याय २१६
२६१. शिवकुमार 'तारियो' २१६
२६२. शिवदत्त शर्मा २१७
२६३. शिवपूजनलाल 'विद्यार्थी' २१८
२६४. शिवप्रसाद शर्मा 'अम्बु' ११९
२६५. शीला पाठक २१९
२६६. शुकदेव प्रसाद वर्मा २२०
२६७. शेषआनन्द 'मधुकर' २२१
२६८. जगदीश शरण 'मधुप' २२२
२६९. श्रीनिवास प्रसाद २२३
२७०. श्रीशरण २२३
२७१. संतशरण शर्मा 'संत' २२४
२७२. श्रीमती कुसुम वर्मा २२५
२७३. संतोष सिसौदिया 'सौम्य' २२५
२७४. सुधारानी शर्मा २२६
२७५. स्नेहलता प्रसाद २२६
२७६. सत्यवती भैया २२७
२७७ सन्तराम त्रिपाठी 'अरविन्द' २२८
२७८. सरस, दयाशंकर मिश्र २२९
२७९. सावित्री शुक्ल २३०
२८०. सांवलिया 'विकल' २३१
२८१. सुदीप २३२
२८२. सुरेश प्रसाद सिंह २३३
२८३. सियारामशरण सिंह 'सरोज' २३४
२८४. सुकुमार २३५
२८५. सूर्यनारायण 'सिद्धार्थ' २३५
२८६. सुधा गुप्ता २३६
२८७. सुरेश 'समीर' २३६
२८८. सुरेन्द्र वर्मा २३७
२८९. सुरेश प्रसाद 'विमल'
२९०. सोमदेव २३८
२९१. हृदयानन्द तिवारी 'कुमारेश' २३९
२९२. हनुमानदास 'चकोर' २४०
२९३. हरिकृष्ण 'पंकज' २४१
२९४. हरिपालसिंह चौहान 'दग्ध' २४२
२९५. क्षमानाथ झा २४३
२९६. हरिमोहन शर्मा २४४
२९७. त्रिवेणी शर्मा 'सुधाकर' २४५
२९८. त्रिभुवनसिंह चौहान 'प्रेमी' २४६
३९९. ज्ञानेन्द्र पाण्डेय २४७
३००. ज्ञानस्वरूप 'कुमुद' ४२८

अपनी बात

मेरे मित्र श्री परदेसी जी ने जब मुझसे प्रस्तुत काव्य सकलन के सम्पादन का भार वहन करने का प्रस्ताव किया तो अपनी पदीय एवं इतर व्यस्ताओं के कारण इस गुरुउत्तरदायित्व को ग्रहण करने में मुझे किंचित संकोच हुआ। किन्तु उनके बार बार आग्रह करने पर मेरे सामने स्वीकृति देने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं रहा और परिणाम स्वरूप यह सकलन गीत प्रेमी जनों के समुख है।

पिछले कतिपय वर्षों मे अनेक गीत-सकलन देखने में आये है। उनमें से कुछ बहुचर्चित रहे है, कुछ अल्पचर्चित और कुछ अचर्चित। विभिन्न सकलनों में सकलन-कर्ता की व्यक्तिगत रुचि-अरुचि का प्रभाव तो गीतों के चयन पर पड़ा ही है, इसके अतिरिक्त कुछ गीत की विधाओं-शैलियो के प्रति आग्रह शीलता से भी वे प्रभावित रहे हैं। मुझे लगता है कि कभी-कभी पूर्वाग्रह सकलनकर्त्ता पर इस कदर हावी हो जाते है और उसके दृष्टिकोण को इतना सीमित-सकीर्ण अथवा एकान्तिक बना देते हैं कि अधिकांश सकलन विविधता रहित, निष्प्राण, तथा उरपभरी एकरसता से आक्रान्त हो जाते हैं। ऊपर से भूमिका मे सम्बन्धित शैली अथवा विधा विशेष पर लम्बी चौड़ी खेडन-प्रमातमक व्याख्या का भारी-भरकम पत्थर उनके गले मे बाँध दिया जाता है जिससे और उसका दम घुट जाता है। वस्तुतः गीत तो नदी की तरह फूट-फूट कर स्वयम् प्रवाहित होने लगता है। उषा के विहग राग का तरह स्वयम् मुखर होने लगता है; उसका प्रयासरहित सहज शिल्प-सौन्दर्य अपना होता है; वह बाद्धिकता के किसी पूर्व निर्मित साचे मे ढाल कर नही तैयार किया जा सकता है। इसलिए आरोहित सौन्दर्य उसे एक ऐसी ही कृत्रिमता प्रदान करता है जैसी विश्व सौन्दय प्रतियोगिता में भाग लेने वाली सुन्दरियों की अगभंगिमाओं और अदाज में आ जाता है; हाँ, उसके विचार में जहाँ ऐसा होता है वहाँ गीत की आत्मा मर जाती है, हाँ, उसके शरीर को सजा-सवार कर, रग-रोगन कर प्रदर्शन के लिए रख दिया जाता है। चश्मा लगा कर देखने वाले उस शव पर ही रीझते रहते हैं।

उपर्युक्त कथन से मेरा तात्पर्य केवल इतना ही है कि गीत को पुराने. नये अथवा ताजे की हवा-बन्द कोठरियों में रखना उसके साथ ज्यादती है। हाँ गीतकार की भाव भूमि, मानस-रचना, अभिव्यंजना-शैली के अनुसार प्रत्येक का शिल्प, बिम्ब-संयोजन और प्रभावशीलता अलग होगी, इसमें दो मत नहीं होने चाहिए। गीतकारों के प्रेरणा-श्रोत भी अलग-अलग ही होते है; उसके अनुसार भी गीत का रूप प्रभावित होता है। इस प्रकार प्रत्येक गीत में अपनी तरह का अलग सौन्दर्य होता है।

मेरा विचार है कि परिस्थितिओं और परिवेश में चाहे जो परिवर्तन भविष्य में हों, गीत की लोकप्रियता पर उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। हाँ, उसका रूप तो परिवर्तन हो सकता है और होगा।

प्रस्तुत संकलन को सभी प्रकार के आग्रहों से मुक्त रखने का प्रयास किया गया है। सभी शैलियों के गीत हैं; मैं जानबूझ कर 'नये गीत'। शब्द का प्रयोग नहीं कर रहा हूँ—अपने अपने रचनाकार के प्रेरणा श्रोत और भावबोध के अनुसार उनके अपने-अपने रूप हैं। इस विविधता में ही इस संकलन की सार्थकता है। सुप्रसिद्ध चोटी के गीतकारों के साथ-साथ नये गीतकारों को स्थान दिया गया है। इन नये गीतकारों में कुछेक के गीतों में मर्म को स्पर्श करने की पर्याप्त क्षमता है। व्यक्तिगत दुख दर्द के साथ उनमें सामाजिक दुख-दर्द का भी प्रखर स्वर है। कुछ गीत समय-सापेक्ष हैं; कुछ समय निरपेक्ष। किन्ही गीतों में आपको प्रतिध्वनियाँ भी लग सकती हैं। लेकिन उसके बावजूद उनका आकर्षण अपना अलग ही है।

जैसा मैंने ऊपर कहा है मैं लम्बी चौड़ी भूमिकाओं के पक्ष में नहीं हूँ। इस संकलन के गीत भी, यदि उनमें सामर्थ है तो स्वयम् आपके हृदय में संकृत होंगे और उनकी गूँज भी कुछ समय तक आपके मन में रहेगी, अन्यथा भूमिका से कुछ नहीं बनेगा, सम्पादक और प्रकाशक को गीत-प्रेमी पाठकों की सकलन के सम्बन्ध में प्रतिक्रिया जानने की उत्सुकता रहेगी। मुझे तो यह पूर्ण आशा है कि ये गीत ठकस के साथ गीतों की महफिल में अपना रंग जमायेंगे।

—मलखानसिंह सिसोदिया

तीन सौ गीत

मेरे सपने

⊖ अंगराज

मेरे सपने हैं
अपने श्रम के शीशे में मढ़कर देखो

इन सपनों में
अभिलाषाओं की परिणति की
आशाओं का
मीठापन है,
तपती धरती पर
मेघ लिये मंडराता
ऐसा सावन है।

उन मेघों से टकराने को
धरती पर जल बरसाने को
तुम अपने गौरव-गिरिवर की
ऊँचाई पर चढ़कर देखो।

कितनी ही दूरी पर हो मंजिल
चलनेवाले पथी के
कदमों से छोटी होती है
जो पथ की लम्बाई से ही डर जाते हैं
घबरा जाता है जिनका दिल
कदमों पर जो विश्वास नहीं कर पाते हैं
ऐसे लोगों की टोली बैठी रोती है

पथ की दूरी घट जाएगी
मंजिल खुद पाँव बढ़ाएगी
तुम आगे तो बढ़कर देखो।

भूलने में सुख मिले तो भूल जाना

अंचल

भूलने में सुख मिले तो भूल जाना

एक सपना-सा समझना ज्यों नदी में बाढ़ आना
भूलने में सुख लिले तो भूल जाना

थीं सुनी तुमने बहुतसी जो लड़कपन में कहानी
शेष जिनकी सुधि नहीं—मैं था उन्हींका एक प्राणी !
सोच लेना—था किसी अनजान पंछी का तराना।

झूमते लय-भार से जिस राग के मिजराव सारे
भूल जाते वे उसे तत्क्षण—गगन ज्यों भग्न तारे
ठीक वैसे तुम मुझे यदि सुख मिले तो मुल जाना।

भूल जाती गन्ध अपना कुंज जाती दूर जब उड़
भूल जाते प्राण काया छोड़ते ही शून्य में मुड़
हो कभी विह्वल व मेरी याद में भर अश्रु लाना

भूल जाता फूल डाली को क्षणों में ही विछुड़ कर
याद मेघों को न करती दामिनी भी आ धरा पर
वढ़ गया जो दीप उसमें अब न तुम बाती सजाना।

वेदना इससे बड़ी होगी मुझे क्या और सुन कर
तुम विकल हो याद करती हो मुझे चीत्कार-कातर
क्यों उठे मेरा वही फिर दर्द छाती का पुराना
भूलने में सुख लिले तो भूल जाना।

नीति को पहचानता हूँ

⊜ अटल चतुर्वेदी

मत दुहाई दो मुझे विश्वास की तुम और आगे
मैं तुम्हारी नीति को सब भांति से पहचानता हूँ ।

जिन्दगी की द्वार से बेचैन हो लेकर निकलना ;
मैं तुम्हारे क्या सभी के द्वार पर माथा पटकता ;
पोंछकर आँसू किसी ने क्या मुझे क्षणभर बिठाया—
देखते ही सब रहे मैं रहा जीवन भर तड़पता ;

मत पुनः सहयोग के स्वर के बहाने गुनगुनाओ—
मैं तुम्हारे गीत को सब भांति से पहचानता हूँ ।

होंठ पर हरदम तुम्हारे हैं थिरकती उच्चतायें ;
उलहना देते सदा तुम सिखा जग को सभ्यतायें ;
स्वार्थ के अन्धेरे में पर जब नयन अपने डुबोते —
कुचलते जाते तभी तुम बेधड़क सब आत्मायें .

बन्धु मेरे चरण की गतियाँ न देखो और तुम—
मंजिलों तक अब स्वयं ही मैं पहुंचना जानता हूँ ।

तुम्हारे ईमान में तूफान सोया है संभलकर ,
तुम्हारी पतवार तट में ही डुबोती है मचलकर ;
मत सहारा दो मुझे हैरान हूँ मैं तुम्हें लखकर—
तुम्हारी नौका किनारों को करे बदनाम छलकर,

ये भला व्यवहार अपना तुम किसी को और दे दो
मैं नहीं सम्मान की अब भीख तुमसे मांगता हूँ ।

बगावत ◉ अनुपकुमार

हर रात उभरती हैं—
मेरे जवान मन के टेलिविजन पर

सलीब पर लटकी
भूखी प्यासी, नंगी
अनेकों कंकाली आकृतियाँ

किन्तु हर सुबह आने को
सिलिंग फेन लगे बेडरूम के
गायरेजीं सोफा पर

लेटा पाता हूँ।

सोचता हूँ हर पल
आखिर यह नादान मन

हर रात क्यों
'बगावत' करता है ?

आँसू ◉ 'अमर सिंह मस्त'

विह्वल नर की विकल कसक में,
छल छल करते रहते आँसू।
पीड़ा का असहाय भाव ले,
शशि मुख पर आ जाते आँसू॥

तप्त हृदय को और तपा कर
कभी व्यथित को भी हुलसा कर।
वीणा की झनकार हृदय में,
झर-निर्झर बन जाते आँसू॥

हर्षित जब मानव हो जाता,
प्रेम फाग की धूम मचाता।
फा ग खेलने ढुल-ढुल मुख पर
ढुलक-ढुलक आजा जाते आँसू॥

जय पावन झंडा प्यारा

⊜ अवधेशकुमार श्रीवास्तव

अम्बर पर फहरानेवाला,
धरती पर लहरानेवाला,
जीवन-ज्योति जगानेवाला,

तीन लोक से है यह न्यारा।
जय-जय पावन झंडा प्यारा॥

हरा रंग धरती की छाया,
श्वेत रंग में सत्य समाया,
केसरिया बल मन का पाया

चक्र सदा से त्याग हमारा।
जय-जय पावन झंडा प्यारा॥

जीवन में जय पायेंगे हम,
अपनी शक्ति दिखायेंगे हम,
इसका मान बढ़ायेंगे हम,

हो इसका यदि एक इशारा।
जय-जय पावन झंडा प्यारा॥

केवल तुमको चाहा मैंने, केवल तुमको चाहा।

जग की अनगिन आकृतियों में मैंने चुना तुम्हीं को,
रूप-रंग-गुण-शील-बुद्धि में मैंने गुना तुम्हीं को,
तन के, मन के तार-तार में लगा प्यार की गाँठें,
जीवन के ताने-बाने में मैंने बुना तुम्हीं को,
अपने सूने मन-मन्दिर में थाप तुम्हारी प्रतिमा,
केवल तुमको चाहा मैंने, केवल तुमको चाहा ॥

तन की कोमलता में मन की निर्मलता भी देखी,
नयनों की लज्जा में करुणामय ममता भी देखी,
कठिन कुटिलता के परदे में सहज सरलता पाई
यौवन-सुष्मा में सनेह की शीतलता भी देखीं,
अंग-अंग की छवियाँ निरखीं, रूप-रग को परखा,
नयन-द्वार से उतर अतर में, अन्तर भी अवगाहा।

खुली ज्ञान की ज्योति दृगों में, तममय भ्रान्ति मिटी है,
घुली शक्ति-स्फूर्ति रगों में, दुर्बल क्लान्ति मिटी है,
दीन अकिंचन जन-जीवन ने अक्षय गरिमा पाई
कोमल शान्ति तुली तन-मन में, व्यथा-अशान्ति मिटी है
तुमको पाकर, सब कुछ पाया, रहा न कुछ पाने को,
आज मनोवांछित फल पाकर, अपना भाग्य सराहा।

नयन अथक अपलक चकोर-से रूप-चाँदनी लखते
प्राण तृषित चातक-से अविरल नेह-माधुरी चखते,
अधर पले पिक-से निशि-लासर नाम प्रेम का रटते,
श्रवण-रन्ध्र मोहित कुरंग-से शब्द-बाँसुरी सुनते,
मैं पतंग-सा लुब्ध तुम्हारी रूप-शिखा पर दहता,
आजीवन निस्वार्थ भाव से तुमसे नेह निवाहा।
केवल तुमको चाहा मैंने केवल तुमको चाहा ॥

जय जवान : जय किसान

⊖ अमरनाथ 'आशुतोष'

किस पवित्र वेदश्रृष्टा-
की पवित्र गीत सा
किस महान देश भक्त-
की महान प्रीत सा।

रवि-सा ज्वाजल्यमान
वक्ष उठा है स्वाभिमान
विश्व में वाणी महान
जय जवान, जय किसान।

किस अजेय विश्व वीर
की अजेय जीत सा
किस भागीरथ की कठोर
कर्मलीन नीति सा।

दृढ़ता कवच समान
पौरुषेयता- प्रमाण
पाप ताप का निदान-
जय जवान, जय किसान।

कर्मयोग का सुगान
मन्द्र महा सिंह-कान
पाचजन्य का आह्वान
जय जवान, जय किसान।

फावड़ा उठाये जा ⊕ अशोक 'वीरेश'

फावड़ा उठाये जा कुदालियाँ चलाये जा,
जिन्दगी की राह में जिन्दगी विताये जा।
राह में मिले जो, तू-उसे गले लगाये जा,
जिन्दगी की राह में, तू कदम बढ़ाये जा।
कंटकों को राह के, फूंक से उड़ाये जा,
जिन्दगी के रत्न को, प्यार में जड़ाये जा।
जागरण के स्वर लिये, एक धुन में गाये जा,
प्रीत गीत गाये जा, जीत धुन बजाये जा।
जिन्दगी के बोझ को, प्यार से उठाये जा,
पर्वतों को चीर कर, राह तू बनाये जा।
एक चोट दे मगर, एक चोट खाये जा,
पर्वतों को तू मगर, हाथ से हिलाये जा।
फावड़े की चोट से सोतों को जगाये जा,
भूख औ गरीबी को, दूर तू भगाये जा।
जननी के हितार्थ में, श्रम सलिल बहाये जा,
शिव समान सृष्टि को अमृत पान कराये जा।

जय हलधर ⊕ अशोक जैन 'रश्मि'

जय हल धर, जय तेरी किसान।

तुझ पे वतन को मान है
तुझ पे चमन को मान है,
जय हल धर, जय तेरी किसान।

लहरा उठेगी हर डगर
लहरा उठेगा हर नगर,
जय हलधर, जय तेरी किसान।

उस माटी की पुकार सुन
उस माटी की ललकार सुन,
जय हल धर, जय तेरी किसान।

अलविदा ⊕ प्रमोद शर्मा 'निर्झर'

सांस मेरी थकी, बोझ है जिन्दगी,
डगमगाता हुआ, मैं चला जा रहा।
कौन सी है डगर, मेरी मंजिल कहीं,
मैं किधर को बढ़ूं, ये नहीं जानता।

मेरे सपने लुटे, मेरे साथी छुटे,
दीप भी बुझ गए, देखता मैं रहा।
छा गया है अंधेरा, मेरी राह पर,
कुछ नहीं सूझता, कि बढ़ूं मैं किधर।

जिन्दगी बन गई, एक बुझती चिता,
जल गया है सभी कुछ, गमों के सिवा।
उस चिता में अगर कोई अंगार है,
टूटती सांस का इक महज सिलसिला॥

चलते चलते मेरी उम्र भी ढल गई,
हर इक चाह मेरी अधूरी रही।
वक्त पूरा हुआ, 'ओ' मैं सोने चला,
अब नए जन्म तक, अलविदा, अलविदा।

दूर लेकिन ⊕ आशारानी व्होरा

उठ रही तेरी भुजाएं, मैं बहुत ही दूर लेकिन,
मुक्ति का आह्वान करती
शक्ति का वरदान भरती

ये सबल तेरी भुजाएं, मैं बहुत ही चूर लेकिन,
तिमिर का परदा हटाती
स्नेह का सोता बहाती

ये विमल तेरी निगाहें, मैं बहुत मजबूर लेकिन,

चैत : कुछ चित्र

⊕ आलोक धन्वा

गीली वंसवारी में दुवकी गौरइया,
कांपा जल-गीत...और पंक्ति-पंक्ति छितराई,

पिछवाडे झुक आये गुमसुम वन-बेंत,
कितने बीमार लगे फसल-कटे खेत,
थके हुये संवदिया-सा दिन यह चैत का !
गोवर लिपा गलियारा गाँवों का।
उड़ती नहीं गंधरुई केसर-वन की,
सोने चांदी के मृगछौने भी नहीं यहाँ,

सिर्फ एक पिजराई दोपहरी-अंजुरी में लिए खड़ी स्वेद-कणी

हायरी अधूरी उपलब्धि,
किन नपुंशक मापदण्डों की ?

आंगन में संवलाया तुलसी का चौरा,
सूख गई अर्ध्यों की एक सदी,

मुरझाये होठों पर, लरज गये वन्दन-वार,
दीर्घ नि:श्वासों की धीरे-वही एक नदी,

जाने किस तप को समर्पित
पुजारिन-सी सांझ यह चैत की !

तीन सौ गी

अरमान मन में ⊕ श्रीमती इन्दु सिन्हा

भर गये अरमान मन में
ज्योतिमय वरदान घन में।

बन गई जो हूक मेरी
मूल से मोती नयन में।

सुरभि खोई जो चमन में
चाँदनी घुलमिल गगन में।

तुम छिपे बन इक पहेली
सरल इस नादान मन में।

रंगमय श्रृंगार तन में
सज चलूं इस पार वन में

लाज के घूंघट हटा दूं
मिलन की मंगल-लगन में।

●

जीवन जो निकल गया ⊕ उपेन्द्रनाथ 'अश्क'

मुट्ठी की सधों से निकल गया जो
पानी—
जीवन था
यह मिट्टी यह रेत, यह कीचड़-सा
जिन से मेरा हाथ सना है
मानुएं हैं
बह न सकी जो
बैठ गई जो
मैं ने क्यों पानी को मुट्ठी में भरना चाहा
क्यों चाहा विष पानी ?
जीना ?

"मन गंध की जागृति गति"

उमाकान्त वर्मा

रागिनी सुनो
जो टेरी गयी ।
चाँदनी गुनो
जो घेरी गयी ।
ओ मत्स्यगंधा !
जो श्रद्धा ने कभी
दिया मनु को हमें
मन-गंध की वही
जागृत गति दो ।

घिरी घटा घनघोर

उमाशंकर वर्मा

घिरी घटा घनघोर, बदरा बरस रहा ।
चहुं दिशि छाया शोर, रसकी धार बही,
नाच रहा वन-मोर, सुध-बुध भी न रही,
हिय में उठती हूक, बालम निर्मोही,
विरहा का संगीत मन को परस रहा,
रिमझिम बरसे मेह, बूंदें इठलातीं,
हल्की बहे बयार, धरती बल खाती,
हरियाली के प्राण उमंगों से भीगे,
तुम हो आज कहाँ, जियरा तरस रहा ।
मन की अल्हड़ साध है बेहोश पड़ी।
पलकों में बरसात है फिर से उमड़ी,
खोये-खोये नैन खोज रहे किसको,
सपनों में भी हाय अब कुछ न रस रहा ।

गीत : तुम्हारे

● उमाशंकर शुक्ल 'उमेश'

यह मत पूछो प्रियवर मुझसे दर्द भरे क्यों गीत तुम्हारे।

मेरे गीतों में मेरे ही उर अन्तर की टीस भरी है,
पीड़ा कह लो या कि वेदना शब्द में जो उभरी है;
खुशियाँ मेरी दर्द बन गईं गीत बन गये दर्द हमारे।
मेरे मानस पर धुँधली सी स्मृति रह-रह छा जाती है,
सावन के घन में बिजली ज्यों चमक-चमक कर छिप जाती है,
ओंठो पर मुस्कान लिए हूँ पर नयनों में नीर हमारे।
कितनी राहें मैंने बदली कितने मैंने वेष बनाया,
लेकिन जग की इन राहों पर बिना प्यास का पथिक न पाया;
कोई रोकर कह देता है कोई सहता है मन मोर।
चातक को स्वाती का पानी गंगाजल से भी बढ़कर है,
कलियों को काला भवँरा ही रति-पति के बढ़कर सुन्दर है;
जग व्याकुल होता पीड़ा मे मैं जीता हूँ दर्द सहारे।
यदि उर की कुछ कसक न होती कविता का आधार न होता,
स्मृतियाँ विस्मृत हो जाती यदि पीड़ा से प्यार न होता;
उन्मादे प्रेमी नयनों के कौन पूजता आँसू खारे।

चिरंजीवी (बलि)

एन० चन्द्रशेखरन नायर

अश्वत्थामा वलिर्व्यासो सनुनांश्च विभीषण :
कृप: परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः

कल्पने नयन खोल,
देख ले, वह भव्य खेल !
दानव थे !!
पर आत्मनिष्ठ, परमप्रतिष्ठ,
सत्यदेवता के इंगित पर
त्याग दिया सर्वसार।
वही सहस्र धार,
करुणा की रुचिर धार।
अपनी प्रजा दिलदार !
मुंह न मोड़ सके हो कठोर,
बस यही था कष्ट एक
महापुरुष को नष्ट एक।
कल्पने, नयन खोल,
देख ले वह भव्य लोक
वीरता के अवतार !
शक्ति के आधार,

स्वात्म-बल पर निर्विकार।
कर दिया त्रिलोक
पूर्णकाम, शांतिधाम, पुण्यनाम।
मदोन्मत्त देवगण का
तोड़ दिया गर्व, अमित भोग के
विषम अन्त को दिलाया याद।
दमकी देह शून्य की मुक्ताभरी
हुई हास्यवदनी श्यामल त्रिभावी !
कल्पने, विहंसती क्या
अथवा रोती मूक मूक ?
कभी सुना ?
कभी देखा ?
नाटक कपटता का ऐसा ब
पर क्या ! हुआ छोटा
ती

अनंत अप्रमेय अखण्ड
भगवान भी नाटा।
मात्र बावन अंगुल का गात्र!
और वहां भी हुई विजय सत्य की
विश्व सम्मोहनमय दान की
नित्य जागरित कर्तव्य की।
कल्पने, नयन खोल,
देख ले, अतुलनीय बली को!
अनुलित निर्भीक,
किया युक्ति-वाद आचार्य ने,
बहा दिये रुदन श्रोत पत्नी ने,
लुभाया सुखद स्वप्निल माया ने,
पर क्या हुआ तनिक
कंपन न हृदय में!

धन्य उस परम धनी का मान,
अद्भुत उस स्थित-प्रज्ञ का ध्यान
हो गया क्षुद्र और, देवेन्द्र,
इस दानवता के आलोक में!
कल्पने, लौट चला,
तेरा मार्ग दुस्तर, हो चला।
किया प्रतिरोध घोर प्रकृति ने,
हुए विछिन्न सभ्यता के सपने,
डुबा दिया कोमलता को संसार ने,
फटा दिल, सज्जनता का,
आरंभ हुआ अराजकता का,
लोप हुआ आस्तिकता का,
नृत्य चला विभीषिका का !!

बस, ढह पड़ा यह स्वर्ग, यहीं–
उस भग्नावशेष का मृत्पिण्ड सही,
पर 'अहंकारी' चिरजीवि निस्पद नहीं।

पीड़ा चुभन मुझे दे देना

⊕ ओम कुमार

फूल बीनते इस उपवन में अगर तुम्हें काँटे ले जायें
आँचल में सुगन्ध समेट कर पीड़ा चुभन मुझे दे देना।

साथी तुम हो कोमल मृदु ओ जीवन पथ बड़ा विकट है
भूल भुलैयां हैं इस जग में पग-पग पर खड़ा संकट है
फिर भी बढ़ना है आगे को गिरते पड़ते रुकते थमते
मुंह जिसने मोड़ा मँजिल से उसका समझो नाश निकट है।

इस मार्ग पर चलते चलते अगर तुम्हें मिल जाये मुक्ति
तो सहर्ष ले लेना प्रिय, आवागमन मुझे दे देना "

जिनके वासी दुःख अभाव हैं उन गलियों से मेरा नाता
जग जिसको रोना कहता है वह मेरा साथी मन भाता
तुमने देखा है सुख वैभव रही प्रेम की तुम पै छाया
मुझसे भाग्य रहा है रूठा मुझसे है प्रतिकूल विधाता

सावन के झूले में झूलो, खेलो संग बहारों के तुम
राहें फूल मुरझाई कलियां, उजड़े चमन मुझे दे देना।

तुम बसते मेरे सपनों में ज्यों रहता संगीत तार में
सागर में लहरों की भान्ति मैं खोया हूँ तेरे प्यार में
जब से पहचान हुई है तुम से मैं अपने को भूल गया
निज सर्वस्व दान कर चुका प्रथम घड़ी में प्रथम बार में

मेरी मनोकामना यह है कि तुम अमरत्व पा जाओ
बड़े प्यार से मैं ले लूंगा, अर्थी कफन मुझे दे देना।

त्योहार व्यर्थ

✓

● ओमप्रकाश 'हेमकार'

जब तक एक व्यक्ति भी धरती पर भूखा नंगा रहता है,
तब तक चाहे रोज मनाओ होली का त्योहार व्यर्थ है ।

रस भीगा यह पर्व रंगीला संग में हंसी खुशी लाता है,
क्षण दो क्षणको सही मगर हर दिलकी कली खिला जाता है,
लेकिन एक कली भी खिलने से पहले यदि मुरझा जाये ।
तो फिर बगिया भर में फैली मधुऋतु और बहार व्यर्थ है ।।

गलबहियां डाले फिरती है बाल वृद्ध युवकों की टोली,
चहुदिशि शोर सुनाई पड़ता होली है, होली है, होली,
लेकिन जब तक बनी हुई है मानव से मानव की दूरी ।
तब तक यह उल्लास और यह सारी चीख पुकार व्यर्थ है ।

सेठ करोड़ी रंग बिरंगे जोकर बनकर बौराये हैं,
नहीं भांग अंग्रेजी बोतल पूरी डेढ चढा आये हैं ।
लेकिन इनका सेवक -सुखुआ जूठी प्लेटे चाट रहा है ।
उसके दिल से तो होली क्या यह सारा संसार व्यर्थ है ।।

होली का त्योहार व्यर्थ है ।

गीत वसंती

कृष्णचन्द्र वत्स

मुझसे मांगो मेरा जीवन
प्राण दान भी देता हूँ।
मुझसे मांगों मेरा उपवन,
आकर्षण भी देता हूँ।

पर यह मत मांगो जीवन से
अधिकार हमारा अपना है

मुझसे मांगो गीत वंसती
आमंत्रण भी देता हूँ
मुझसे मांगो कुछ रसवन्ती
एक विर्सजन देता हूँ।

पर यह मत मांगो गाजर से
शृंगार हमारा अपना है।

मुझसे मांगो प्रीत उमरती—
एक निमंत्रण देता हूँ।
मुझसे मांगो रीत खनकती,
एक जलन भी देता हूँ।

पर यह मत मांगो सागर से
मझधार हमारा अपना है।

टूट रही हैं सांसे

● कृष्णदत्त श्रोता

खेवा, किस स्थल पर ले लाया—
टूट रही हैं सांसें तन की,
शत् शत् लहरें रे बन्धन की।

उलझ रही हैं अलकें पलकें, हास उडाती है यह माया।

खेवा किस स्थल पर ले लाया।
उथला सा भी गहन पानी,
गहरे जल की व्यर्थ कहानी।

जलती है रे! हल पल ऊपर, शीतल भी भी मिट्टी काया।

खेवा, किस स्थल पर ले लाया!
लाभ न मेरा हानि दिखाती,
कांप रही है दुर्बल छाती।

व्यर्थ निशा की निद्रा मेरी, व्यर्थ दिवस में जो कुछ खाया।

खेवा, किस स्थल पर ले लाया।
ठुकर न, दोन बिसारा हूँ ए—
सांसों से चिर हारा हूँ ए—

समझादे इस नादानी को, सब कुछ सपना सब कुछ छाया!

खेवा, किस स्थल पर ले लाया!

कक्ष-भ्रष्ट ज्योति-पिण्ड

प्रो० कृष्णविहारी लाल

अपनी कक्षा से हटे
ज्योति पिंड
अन्धी गति में वँधे अंग,
खिचती चली जा रही
रेखा अग्नि गर्भ,
वनते बिगड़ते
प्रतप्त लाख सूर्य
वरसाते
विपुल आग,
मृत्युशीत, चन्द्रलोक
धरा-ज्योत-समंकृत
अन्धे, विषण्ण,
अकल्पनीय,
गणनातीत
हरे नए गाभे के
अरुणारे अधरों पर
टूटते तारों के
गिरते अंगारे !
रोम-राजि के
वरजते शताधिक कर
कक्षा में चलें
ज्योति पिण्ड,
वीजों को अकुराएँ
ज्योतिकर,

ओषध को सरसाएँ
सुधावर्षी
जीवन को जीने दें
अन्धापन,
अनियम, अलक्ष्यता,
टकराते,
टूटते, झुलासाते :
रोम-रजिके
वरजते शताधिक कर
फिर भी उठ जाते हैं
'कक्षा मे वँधें
निर्वन्ध
ज्योतिपिण्ड

पलकों में खोया

कृष्ण भारद्वाज 'शरद'

उलझा मन अलकों में मेरा,
पलकों में खोया सपना है।
सांसों में सिसकता तूफाँ है,
खामोश मिलन पर अपना है।
ये शरमाने की रात नहीं,
मदहोश हवाएँ यौवन की।
नैनों से नैना मिल जाएँ
खिल जाएँ कलियाँ चितवन की।
पायल मन घायल करती है
नथनी, झूमर झल मल झलके।
बिन्दा चन्दा ज्यों दाग लगा,
नैनों से आँसू क्यों ढलके।

पीड़ा

डा० ओमानन्द रू० सारस्वत

दो भावों के बीच
जन्म में रही पड़ा क्षण को
मैं हर चेष्ट, निर्भ्रान्त. मूढ़
दाई-सा देख रहा हूँ
साथी हूँ मात्र
कि कहीं भ्रूण हत्या नहीं हुई।

बहुत दिनों पर ...

कृष्ण नन्दन 'पीयूष'

बहुत दिनों पर
रात-रात भर
बादल बरस रहे !

छत पर पड़ती बूंद, नयन से ढलते नीर रहे,
ऐसे में कोई मन की क्यों गोपन कथा कहे ?
सब कुछ भला-भला, फिर भी याद न भूल सकी;
सूनी डाली पर कोई फिर कली न फूल सकी !

बहुत दिनों पर
इन आंखों में
काजल तरस रहे !

लिखती पत्र अनेक, सभी को स्वयं फाड़ देती हूँ,
भय की छाया देख आरती में पुकार लेती हूँ ;
बढ़ते पांव मगर मिल पाती चाही राह नहीं,
उदवेलित जीवन-सागर को थाहे, थाह नहीं,

बहुत दिनों पर
आज मेघ क्यों
मन को परस रहे !

बृज से मथुरा पास किन्तु यह दूरी बहुत बड़ी,
पग-पग पर अवरोध, रात-भर ठहरी नहीं झड़ी;
सुनती रही बांसुरी निश्चल राधा भवन खड़ी,
रहा चीखता व्योम, अश्रु की झड़ती रही लड़ी !

बहुत दिनों पर
रात-रात भर
बादल सरस रहे !

रूप के द्वार पर

● कृष्णानन्द व्यास 'वेआस'

रूप के द्वार पर देख चढती उमर :
तन संवरने लगा मन मचलने लगा।
रीती रीती लगे प्रीत बिन गागरी
अब झरने लगा सब्र ढलने लगा।

गीत गाने लगा कोइ तनहाई में
आह डसने लगी आके जमुहाई में।
लाख सभले मगर डगमगाने लगे
बौर आने लगी दिल की अमराई में
बीती बीती लगे बचपने की डगर
प्यार पलने लगा प्यार खलने लगा

करने पीछा लगी हर अवारा नजर
करे कमसिन ए कैसे गवारा कहर।
जां लुटाने लगे राह के राहगा
पाके वादे सवा वे सहारा सहर
जीती जीती लगे बाजी हारी हुई
रंग निखरने लगा ढंग अखरने लगा

ख्वाब कितनों के अब मुस्कराने लगे
खुशनुमा ख्याल भी वद कहाने लगे।
ऐसी नजर बदली नये दौर ने
गैर भाये हा ! अपने बिराने लगे।
फीकी-फीकी लगे जाने समझी लहर
अंग सिहरने लगा रंग सुहाने लगा

अन्तगीत.........

⊕ कृत्यानन्द सिंह

कुछ अपना ही गा लेता हूँ !
जीवन-पथ पर, मस्ती में भर
युग के संघर्षों में चलकर
अपनाता हूँ, जो कुछ मिलता
जग-जीवन से ही टकराकर
निज अतीत से पूछ हृदय की
गाकर तृषा बुझा लेता हूँ !
कुछ अपना ही गा लेता हूँ ।।

ले उत्प्रेरण, नव आकर्षण
होते कितने भाव निदर्शन
इस अभिप्रेत भावना से ही
स्परित है कवि का जीवन
शुष्क-हृदय के सूने पन में
मधुमय रस बरसा लेता हूँ ।
कुछ अपना ही गा लेता हूँ ।।

जान-प्रहर में, उर-अतर मे
प्राण जाग उठता है स्वर में
आशा और निराशा मेरी
लहराता उन्मुक्त लहर में
जीवन की उन्मुक्त लहर में
जीवन की अनुकूल दिशा में
चलकर राह बना लेता हूँ ।
कुछ अपना ही गा लेता हूँ ।।

खोजती हूँ यामनी में दामनी में...

● कमला जैन 'जीजी'

खोजती हूँ यामिनी में दामिनी में ;
मधुर मेरा जिन्दगी का गान ।

छिप गया है सघन तम में राग मेरा,
सो गया है आज मन का साज मेरा ।
भूल मेरे स्वर जहाँ पर वह गए हैं,
कौन सा वह देश है अनजान ।

एक भी आवाज मन की सुन न पाई,
किस किरण ने रागिनी मेरी चुराई ।
कौन दे खोया हृदय का गीत मेरा ?
कौन समझेगा मेरा अभिमान ।

अब कहाँ है ज्योति जो दीपक जला लूँ ?
अब कहाँ है बीन जिससे गीत गालूँ ?
भूलती हूँ मैं सभी वे स्वर पुराने,
भूलती हूँ हृदय की पहिचान ।

रात का ये दीप भी बुझने लगा है ।
रश्मियों का रंग भी घुलने लगा है ।
अब कहाँ ढूँढ़ मृदुल झंकार मेरी,
हो रहा है नील नभ सुनसान ।

देखा एक वृक्ष धड़ से ;
जड़ तक भाव-कुसुम से—
भरा फूला था ;
हरी हरी पत्तियों में—
लाल के सरिस्रा सुमन ;
सुरभित झूला था ;
पछियों का दल
घोसलों का घर ;
वाहर भीतर जग मग,
जो रहा भीड़ में प्रीत हो भीत
गयी ढह—
कोलाहल में वात गयी रह
रेखा एक खिच गयी तड़ से
पाव गया रुक मन वही
भूला था ॥

आ गई काली निशा है,
अति अपरिचित हर दिशा है,
आंधियों-तूफान से बच—
दीप मेरे रात भर जल ।
रात का साथी, न साथी,
भोर की आशा न आती,
आरजू तुझसे यही है—
मीत मेरे साथ भर चल ।
देखकर तेरी भलाई,
सोचता जलता सचाई,
साथ तेरे जल रहा यों—
रोशनी है वस जलन-फल ।

[१]

सूना पथ :
धीरे, धीरे, धीरे—झरते
सजल-पतझर-पात
स्वप्न टेरती
कुहरिल, उनींदी रात
नि:स्वन सहलाता
एक दीये का हाथ
दरवाजे-पार :
सब मन
उदासी, अवसाद।
सब मन प्यार।

[२]

बिना करवट बीत जाए रात
अँधेरा, बस, अँधेरा—दीखे
उजास उछाल दे
लौ-सा अकेलापन
रोशन घेरों से दूर, चुपचाप—जलता रहे
शून्य को पाटते पंख भी
संगीत फेंकते हवाओं में,
और भूल जाते—
मुझको भी
देना, देना, और बस, देना।
फिजूल —पागलपन—भी—
दिलचस्पियों का होना और नहीं होना।

× × ×

समय
मुझमें नहीं,
मैं समय में बीत रही हूँ।

वियोगी-कलरव

⊖ कान्ति बोरा

मेरे अनजाने मन में
अचानक उदय प्यार हुआ,
मिलन हुआ कभी विरह हुआ
हँसता जीवन व्यथित-हार हुआ।

एक क्षण सुख की वर्षा
दूसरे पल हाहाकार पाया,
आने को था वसंत आशामय
वही पतझड़ का संसार हुआ।

कभी भाव-बांसुरी बज उठती
कभी उभरते जाते प्रेमाद्गार,
रैन सपनों में तुमको पाया
सवेरे निर्मम अत्याचार हुआ।

योवन था अमुल्य ही मेरा
प्रिये ! बिन-मुल्य ही गया,
प्रेम-सरिता को अभिलाषा में
मुझसे निष्ठुर व्यवहार हुआ।

रुक न सका पट पर पलभर को

कुन्दनसिंह तंवर 'सजल'

कितनी बार देख आया हूँ, तूफानों को नाव डुबोते—
किन्तु लहर के आमंत्रण पर, रुक न सका तट पर पल भरको।
सोचा था, पापों की गठरी, सिर से कभी उतर जायेगी,
मौन तपस्या करते करते, शायद उमर निखर जायेगी,

क्षमा याचना करने पर, ऐसा विश्वास नहीं था, लेकिन—
आस कुँवारी ही जनमी थी, और कुँवारी मर जायेगी।
शायद विष ही मेरे खातिर, मीराँ का अमृत बन जाये—
दूध पिलाकर लाख जतन से, इसीलिए पाला विषधर को ।।२।।
उपवन के मुकुलित फूलों से, किसको नहीं प्यार होता है,
अल्हड़ योवन की भूलों से, किसको नहीं प्यार होता है,
अगर नहीं मिल सके जिन्दगी में, नव कलियों का साया तो—
गुलशन के तीखे शूलों से, किसको नहीं प्यार होता है ?

जीवन का मधुमास हमेशा, एक सुनहरी धोखा निकला—
इसीलिए घायल मन ने बस, मांग लिया केवल पतझड़ को।।
सावन के साये में किसकी बादल ने मनुहार नहीं की,
तिरछे नयनों में बस किसकी, काजल ने मनुहार नहीं की,
कौन तृषित लौटा है साकी के द्वारे आकर जीवन में—
कौन अभागा ऐसा जिसकी, महफिल ने मनुहार नहीं की ?
मैं तन मन से घायल, जग की, मनुहारों से ऊब गया हूँ—
इसीलिए देवता समझ कर पूजा है मैंने पत्थर को ।। ३ ।।

संकेत

⊕ कुमार रस्तोगी

है भले बाहर उजेला,
पर गहन अन्दर अंधेरा,

ज्ञान का दीपक जला ले !

पंथ का पंथी अकेला,
दूर भोले लक्ष्य तेरा,

पुण्य को सहचर बना ले !

चंद क्षण का जगत मेला,
है कहाँ पर ध्यान तेरा,

अहम् का पर्दा हटा ले !

काल का नन्हा निवेला,
े अविद् यह जीव तेरा,

ृष्ट को अपने मना ले !

●

टूटे जो सपने हैं
वे सब तो अपने हैं
कोई साकार सपन होगा तुम्हारा ही।

मेरे दरवाजे पर
पीड़ा के गूँजे स्वर
बिन बरसे लौट गया
बदली आँसू हर

जितने भी पतझर हैं
मेरे ही अनुचर हैं
कोई गुलजार चमन होगा तुम्हारा ही।
कोई साकार सपन होगा तुम्हारा ही।

मेरे टूटे मन में
सौ-सौ गायन जन्मे
बिन बरसे लौट गये
सुधियों के आँगन में

गम की जो रातें हैं
मेरी सौगातें हैं
कोई घनसार गगन होगा तुम्हारा ही।
कोई साकार सपन होगा तुम्हारा ही

खुशियों की गागर से
आँसू के पनघट तक
जीवन के आँगन से
मृत्यु के मरघट तक

मेरी इस अर्थी पर
डाली सबने चादर
कोई लाचार कफन होगा तुम्हारा ही।
कोई साकार सपन होगा तुम्हारी ही।

तीन सौ

प्रार्थना

केदारनाथ 'कोमल'

भगवान् !
मुआफ करना
कभी कभी तुम्हे
मजाक करता हूँ :
लेकिन तुम्हारा बहुत बडा मजाक
जब से होश सभाला है
हरता हू !

कवि लिप

कार्तिकनाथ गोपानाथ ठाकुर

अपनी ही लिखावट जब पढ़ नहीं पाता हूँ
तो दूसरे को पढने दे देता हूँ
और ऐसा करना मेरी शान और
पढनेवाले का गौरव हो जाता है—
उपलब्धि यही आधुनिक कला की।
मेरी लिखावट

शायद पिकासो की घनात्मक चित्रकारी
या अत्याधुनिक कविता की तरह होती है।

लगता है, अपनी लिखावट की
यह पराश्रित बदकिस्मती
यायावर की तरह भटकती रहेगी,
मंजिल पर मंजिल खोजती फिरेगी।

एहसास

● के० के० शर्मा

जिस वक्त सम्भालोगे दिल को और दिल न सम्भाला जायेगा।
उस वक्त हमारी उल्फत का एहसास तुम्हें हो पायेगा॥

जिस वक्त अकेले में तन्हा खुद को तुम बैठा पाओगे।
उस वक्त तुम्हारे दिल में भी अनजान कमी सी अखरेगी॥
खोजोगे और न पाओगे रंजिश से दिल भर जायेगा।
उस वक्त हमारी उल्फत का एहसास तुम्हें हो पायेगा॥

दिन भर तो काम में जुट कर भी माना कुछ याद न आयेगा।
लेकिन जब सोने की खातिर तुम प्यार से पलकें मूँदोगे॥
उस वक्त तारीकी में रौशन माहताब सा चेहरा आयेगा।
उस वक्त हमारी उल्फत का एहसास तुम्हें हो पायेगा॥

सोने की बारहा कोशिश पर जब नींद तुम्हें न आयेगी।
करवट पर करवट बदलोगे और रात यूँही कट जायेगी॥
उठ-उठ कर पहरों टहलोगे रह-रह कर दिल घबरायेगा।
उस वक्त हमारी उल्फत का एहसास तुम्हें हो पायेगा॥

जिस वक्त गुजरते जोड़े को बाहों में बाहें डाले हुये।
इठलाते गाते मुस्काते तुम मौज मनाते देखोगे॥
पहलू में तमन्ना मचलेगी और जिद्द पर दिल आ जायेगा।
उस वक्त हमारी उल्फत का एहसास तुम्हें हो पायेगा॥

कच्ची मट्टी की दिवारों पर
फूस की झोपड़ी
बरसात के पानी से गली
एक, दो, तीन नही
अनेकों खड़ी हैं बेतरतीब
इसमें भी रहते हैं
बहुत से आदमी
जिनके तनके कपडे
मैले हैं—फटे है
जिसे पहनकर भी वे नगे हैं
ऐसी जिन्दगी है
बहुतों की जिनको कुछ ज्ञान नहीं है
दुनिया का ।

कहने को जीते हैं
भूख में जल-जल कर मरते है
दूध नही, दही नही, घी नहीं
पानी से रोटी खाते है ।
उनकी हर सांस में
आह है !
हर गीत में दर्द है
वेबसी हैं— लाचारी है
वे देखते है दुनिया को
फिर स्वय को निहारते है
तब सोच नहीं पाते हैं
वह किस पाप का फल पाते हैं ।

धरती ही नरक है
नरक !
कीट पतंगों सा जीते हैं
और अध जली लकड़ी सा
सुलग-सुलग जीते जी मरते हैं ।

सौगात लौटाकर फिर आई

के० सी० 'भारती'

अच्छा है ! तुमने दर्द दिया कुछ और मुझे—
इससे वह भूली याद लौट कर फिर आई।
हर एक मुसीबत आती है दुलहन बनकर,
हर रोज दर्द आते हैं यों विपदा लेकर।
हर क्षण में एक घुटन सी बढ़ती जाती है,
हर एक लहर जाती है छोड़ सिकन तट पर॥
अच्छा है तुमने नहीं बुहारा आंगन को—
इससे अन्तर की साथ लौट कर फिर आई॥
तारों को एक नजर दुनिया लख लेती है,
पर उल्कापात न सबको दिखलाई देता।
हसते हैं गुल तो सारी धरती हंसती है,
पर मुरझाना न सबको दिखलाई देता॥
अच्छा है तुमने देखा नहीं तूफानों को—
इससे वह बिसरी बात लौट कर फिर आई।
सब कुछ सह लेता हूँ इसलिये कि सहने से,
मानव इक दिन बन जाता है भगवान्।
कुछ संघर्षों के बाद सत्य बढ़ जाता है,
सूरज भी तप कर झलकाता है स्वाभिमान।
अच्छा है तुम जो ताजमहल पर मिले नहीं—
इससे वह पूर्णिमा रात लौट कर फिर आई।
यदि तुम मुझको कुछ और सुखी रहने देते,
तो सारी गीतों की दुनियां उजड़ गई होती।
दुख के शबनम में साथी सारे घुले हुये,
यह अगर नहीं होता तो बात बिगड़ गई होती।
अच्छा है यह जो विरह छा गया नयनों में—
इससे तेरी सौगात लौट कर फिर आई।

दृढ़ संकल्प

केशवदेव शास्त्री 'केशव'

बनने को वरदान चले हैं, मन के ये अरमान सब,
साथी, इनको चूर न करना शपथ तुम्हें है देश की ।

लेकर प्रण, प्रस्थान किया है, प्रगति मुक्ति अभियान है,
राष्ट्रमान की रक्षा करना, रखना, सुधि गणवेश की।

क्योंकि जगाया तुमको किसने, लाल बाल अरुपाल थे,
दादा, लक्ष्मी, राणा, शिवाजी, वीर भगत सिंह लाल थे।

मिश्रा, दास, प्राण दे प्रण को, पूरण किया महान् है,
राष्ट्र-पिता 'बापू' की मुक्ति, सत्य-अहिंसा ढाल थे ।

सुधि रखना 'सुभाष' वाणी की,
प्राण धरोहर, देश की' ।

संस्कृति और सभ्यता कहती, वैदिक काल पुरान की,
शपथ तुम्हें 'गीता' की हिन्दू, मुस्लिम बन्धु कुरान की।

गुरु 'ग्रन्थ साहब' भी कहते, राष्ट्र-भक्ति ही धर्म है,
महावीर गौतम बतलाते, रखना सुधि इन्सान की।

व्यथा दूर करदो, समाज की,
तभी प्रगति इस देश की ।

धारा सुखद 'समाजवाद' की बहती जाती आज है,
किन्तु नहीं वह सौख्य लोक में, मुक्त न सकल समाज है।

तुम्हें विषमता निशा हटाकर, रवि लाना वह साम्य का,
जिसकी विभा, प्रकाशित सब हो, वही सुखद जनराज है।

सर्वोदय में उन्नति सब की,
प्रगति भरी है, देश की ।

त लौटाकर फिर आई

के० सी० 'भारती'

अच्छा है ! तुमने दर्द दिया कुछ और मुझे—
इससे वह भूली याद लौट कर फिर आई ।
हर एक मुसीवत आती है दुलहन वनकर,
हर रोज दर्द आते हैं यों विपदा लेकर ।
हर क्षण में एक घुटन सी वढ़ती जाती है,
हर एक लहर जाती है छोड़ सिकन तट पर ।।
अच्छा है तुमने नहीं वुहारा आंगन को—
इससे अन्तर की साथ लौट कर फिर आई ।।
तारों को एक नजर दुनिया लख लेती है,
पर उल्कापात न सवको दिखलाई देता ।
हंसते हैं गुल तो सारी धरती हंसती है,
पर मुरझाना न सवको दिखलाई देता ।।
अच्छा है तुमने देखा नहीं तूफानों को—
इससे वह विसरी वात लौट कर फिर आई ।
सव कुछ सह लेता हूँ इसलिये कि सहने से,
मानव इक दिन वन जाता है भगवान् ।
कुछ संघर्षों के वाद सत्य वढ़ जाता है,
सूरज भी तप कर झलकाता है स्वाभिमान ।
अच्छा है तुम जो ताजमहल पर मिले नहीं—
इससे वह पूर्णिमा रात लौट कर फिर आई ।
यदि तुम मुझको कुछ और सुखी रहने देते,
तो सारी गीतों की दुनियां उजड़ गई होती ।
दुख के शवनम में साथी सारे धुले हुये,
यह अगर नहीं होता तो वात विगड़ गई होती ।
अच्छा है यह जो विरह छा गया नयनों में—
इससे तेरी सौगात लौट कर फिर आई

दृढ़ संकल्प

केशवदेव शास्त्री 'केशव'

बनने को वरदान चले हैं, मन के ये अरमान सब,
साथी, इनको चूर न करना शपथ तुम्हें है देश की ।

लेकर प्रण, प्रस्थान किया है, प्रगति मुक्ति अभियान है,
राष्ट्रमान की रक्षा करना, रखना, सुधि गणवेश की ।

क्योंकि जगाया तुमको किसने, लाल बाल अरुपाल थे,
दादा, लक्ष्मी, राणा, शिवाजी, वीर भगत सिंह लाल थे ।

मिश्रा, दास, प्राण दे प्रण को, पूरण किया महान् है,
राष्ट्र-पिता 'बापू' की मुक्ति, सत्य-अहिंसा ढाल थे ।

सुधि रखना 'सुभाष' वाणी की,
प्राण धरोहर, देश की' ।

संस्कृति और सभ्यता कहती, वैदिक काल पुरान की,
शपथ तुम्हें 'गीता' की हिन्दू, मुस्लिम बन्धु कुरान की ।

गुरु 'ग्रन्थ साहब भी कहते, राष्ट्र-भक्ति ही धर्म है,
महावीर गौतम बतलाते, रखना सुधि इन्सान की ।

व्यथा दूर करदो, समाज की,
तभी प्रगति इस देश की ।

धारा सुखद 'समाजवाद' की बहती जाती आज है,
किन्तु नहीं वह सौख्य लोक में, मुक्त न सकल समाज है ।

तुम्हें विषमता निशा हटाकर, रवि लाना वह साम्य का,
जिसकी विभा, प्रकाशित सब हो, वही सुखद जनराज है ।

सर्वोदय में उन्नति सब की,
प्रगति भरी है, देश की ।

कल्पना और गीत

केशव प्रसादव्यास

किसने आज कल्पना दी है किसने गीत जगाया है,
किसने अंधकार में अरमानों का दीप जलाया है।

मेरा एकाकीपन मुझसे सहा नहीं जाता,
भाव तुम्हारे ही उर के पर गीत न बन पाता।
ऐसा लगता है जैसे सारा जीवन शमशान है,
तुमसे इतना दूर कि मुझसे रहा नहीं जाता।
किसने मेरे अन्तर की ये व्यथा जान पाई,
फिर क्यों आज द्वार पर मेरे बजती शहनाई,
मैं तो सदा तिमिर में रहता आया हूँ,
फिर प्रभात की किरण आज क्यों पास मेरे आई

मैं इस जग में सबके लिए एक अनभिज्ञ पहेली हूँ,
और न अब तक कोई मुझे समझ पाया है।

किसने आज कल्पना दी है.........

आज तुम्हारी याद मधुर स्वप्नों का मेला है,
मेरा सारा जीवन तूफानों में खेला है,
मेरी जीवन की नैया को भी माझी ने छोड़ दिया,
इसीलिए मैंने इस जग से अपना नाता तोड़ दिया।
चला अकेला मझधारों पर लहरों ने मुख मोड़ लिया,
और किनारा पा न सका था, मुझे भँवर ने घेर लिया
कौन मुझे उस बीच भँवर से आज यहाँ ले आया है

किसने आज कल्पना दी है.........

आखिरी रात

कैलाश श्रीवास्तव

आखिरी रात ! सुला लेने दो पीड़ा को
कल सुबह तुम्हारी डोली उठ जाएगी।

प्राण तुम्हें पतवार कहा था, सोचा था मंजिल पा लूंगा।
अपने स्वर तुममें बांटूंगा अपनी उमर तुम्हें दे दूंगा।
लेकिन जग से छला गया हूँ खुशी जनम की पीर बन गई,

आखिरी रात ! चूम लेने दो पलकों को
कल आँख तुम्हारी सावन बन जायगी।

भार लिए अभिशप्त हृदय का पनघट पर प्यासा भटका हूँ,
अपनी पागल प्रीत छुपाकर हर मन के द्वारे अटका हूँ।
सिर्फ तुम्ही से मिला समर्पण लेकिन असफल रही अर्चना,

आखिरी रात झूम लेने दो चन्दा को फिर पूनम कोई रात न बन पाएगी।

कांच चुभे सी जहर जिन्दगी आंसू कर्ज जमाने के हैं।
हर सिंगार महकती सेजें केवल फर्ज निभाने के हैं।
मैंने विश्वासो के तट से युग की रीत नही पहचानी,

आखिरी रात ! बांध लेने दो बाहों को
कल देह तुम्हारी सांस न छू पाएगी।

आवारा सांसों की आदत जाने साथ छोड़ कब चलदें,
कब जाने बसंत से चिढ कर ये पतझर बगावत करदें।
कितनी तेज समय की गति है मिलन घड़ी बीती जाती है,

आखिरी रात ! बिछा लेने दो आंचल को
कल जाने मेरी लाश कफन पाएगी।

मोती झरे जांय

डा० गणेश खरे

ओ मेह भैया बरस धीरे-धीरे
मोरे निपसाने खेतन के मोती झरे जांय।

मुस्कानी केसर की निपसानी क्यारी,
लहरानी धरती की सतरंगी सारी।
पियराने पतन की फहरानी चूनर,
अरुणारे अंगन की महक उठी लाली।
ओ बेदरदी न ओरे गिरा,
मोरे गेंहुन के खेतन के मोती झरे जांय।।

पूरब में सूरज है, पश्चिम में लाली,
फूल उठी परती की पोर-पोर डाली।
आमन के बौरन से गूंज रही बांसुरी
अकुलानी धरती के प्राणन की सांस री।
ओ री हवा न आंधी उठा,
मोरे प्राणन के बिरवा ये टूट-टूट जांय।
मोरे निपसाने खेतन के मोती झरे जांय।।

यादों का प्लाट

⊖ गिरराजशरण

मैंने,
तेरी यादों का प्लाट
लेकर
अरमानों की ईंटों को
भावनाओं के गारे से चिना था
और प्रेम भवन बनाया था
लेकिन विरह की आंधी ने
झंझावातों के साथ आकर
मेरे प्रेम भवन को
ढहा दिया
भावनायें सूखी मिट्टी बन उड़ चलीं
अरमान चूर्ण-चूर्ण हो गए
परन्तु यादों का प्लाट
उसी प्रकार पड़ा हुआ है,
वीरान सा—

o

तुम रूठ गये

गिरीश के. 'सुमन'

तुम रूठ गये, जहाँ रूठ गया,
अब क्या कहूं तुमसे।

उदास शाम है, गुबार जहान है,
मेरे गम के साये में भर-भर अश्क बहते हैं,
तुम चुप हो वहां, मैं तन्हा हूं यहां,

इन मचलती फिजाओं से,
अब क्या कहूं तुम से।

घर घर चर्चे करवा दिये तुम्हारे प्यार ने,
आज तुम कहीं, मैं कहीं हूं बेबस इन्तजार में,
ये कैसी आग लगी है इस जमाने को,

मेरे प्यार से,
अब क्या कहूं तुमसे।

तुम मुझसे इकबार कहीं चुपके से मिललो,
तमाशाई इस जिन्दगी का कोई फैसला करलो,
शबेगम बहुत लम्बी है, इसके चिराग रोशन करलो,

मैं परेशां हूं इन तमाशों से
अब क्या कहूं तुमसे।

तुम्हारी यादों का चिराग जलाए बैठी हूं,
ये चिराग मेरी जिन्दगी है, उमर रोशनी है,
तुम चाहो तो इसे रोशन करदो,

या गुल एक फूंक के लहमे से,
अब क्या कहूं तुमसे।

/ ज्ञात मुझे है

⊕ गिरीश श्रीवास्तव 'गिर्जेश'

मैं दुखिया जीवन का साथी हूँ

तुम मेरे मत आओ पथ में साथ निभाने
मैं तो रो-रो कर ही हंस लूंगा
घुट-घुट कर ही] जी लूंगा
आंसू की झड़ी लगी नयनों से
दिल की धड़कन सुन लूंगा

तुम मत आग्रो जीवन की मुझको राह दिखाने,
मैं :दुखिया जीवन का साथी हूँ ।

ज्ञात मुझे है बस इतना ही
इस जीवन में गम ही गम हैं
फूल हुए सब दूर कि मुझसे
कांटे ही ग्रब कदम कदम हैं

तुम मत ग्राओ अब मेरे दुख में हाथ बटाने,
मैं दुखिया जीवन का साथी हूँ ।

०

कैसे संध्या दीप जलाऊँ

◉ गुलाबसिंह प्रतिहार

तारे हंसते चिढ़ा गगन में, पूनम चांद मुखर जाता,
हृदय मीत : अब तुम्हीं बतादो, कैसे संध्या दीप जलाऊँ ॥

नेह की दीवार से, लौट आते हैं प्रणय,
आँख बोझिल, राह भी देती नहीं।
साधना पर कल्पना का रंग कैसे चढ़े
कोई किरन विश्वास तक देती नहीं ॥

मन्दिरों में भी भगवान को पाता नहीं,
साधना की मूर्ति तक भी जा पाता नहीं।
विश्व का केवल बचा एक मैं पराया,
जानकर भी रस्म को, निभा पाता नहीं ॥

ज्योति है तेरे सदन में, काली घटा मेरे दमन में
मौन के बंधन बनादे, गीत क्या फिर से बनाऊँ ॥......

भूल को मैं भूलता जितना गया,
विगत यादें चित्र सी अंकित हुई फिर।
खून के अश्क से बाती जलाता गया,

विश्वास के सपन सी, बुझती गई फिर,
अश्रु—आँखों का कभी मैंने न माना,
अश्रु का घूंट भी मुझे पीना पड़ा है।
सांस मेरी पूर्णिमा की रात में,
इसलिए मावस रात को जीना पड़ा है ॥

तुम न आना फिर सपन में, दीप लेकर के पराया,
प्रान मेरे हर चिता में, दीप क्यों ? कैसे ? जलाऊँ ॥

कौन सा अपराध

⊕ गोपाल चतुर्वेदी

रागिनी पर किसी का बन्धन नहीं है,
चाँदनी को कैद आँगन की नहीं है,
चाँदनी—तन—रूप को,
स्पर्श जो कर ही लिया तो—
कौन सा अपराध फिर मैंने किया है!

सजा भँवरे को मिली कोई बता दे,
गंध के या पंथ पर पहरा लगा दे,
यदि किसी मादक अधर से,
घूंट भर भी लिया तो—
कौन सा अपराध फिर मैंने किया है!

जो किसी की साध पलकों में संजोये,
जो किसी की याद में जीवन डुबोये,
घृणा की इन वादियों से,
कुछ अलग जो ही लिया तो—
कौन सा अपराध फिर मैंने किया है!

निरख रही बार-बार

गोपाल लाल सिजुआर

इस प्रदेश वेला में अलक बन्ध खोल, अलक किसने बिखराये हैं,
मधुवन में बैठ मगन करती सोलह सिंगार, निरख रही बार-बार,
मोहन की बाँसुरिया बजी नहीं कहीं, आज मूच्छित हैं तार-तार,
विरहिन की आंखों ने घोर तमाच्छन्न क्रूर काजल फैलाये हैं
इस प्रदेश वेला में अलक बन्ध खोल, अलक किसने बिखराये हैं।
फाग खेल संध्या ने अनजाने विकसित हो गोरोचन छींटा है
सातों रंग मचल रहे क्षिति-पट पर अनुमानित किसने घन खींचा है
निरख रही कामिनियाँ ऊँचे वातायन से आँचल लहराये हैं
इस प्रदेश वेला में अलक बन्ध खोल, अलक किसने बिखराये हैं।
चकित भीत हरिणी ने नेहिल अँखियाँ रसाल तुमसे ही पायी है
गति मस्ती की, हरियाली धरती में तुमसे ही आयी है
सुधियों की पायलिया झनक उठी चिन्तन स्वर छाए हैं
इस प्रदेश वेला में अलक-बन्ध खोल, अलक किसने छितराए हैं

तुमने परसा

⊕ गोपीकृष्ण गोपेश

तुम ने मुझे परसा
देश की
विदेश की
सीमाए तोड़ी
साधों की दिशाए
अनजाने मोड़ी
व्यक्ति-बोध
सावन के बादल-सा बरसा
तुम ने मुझे परसा

चौहद्दी बाधी
एक
नयी-नयी हद ले
नदिया-पहाड़ों के
सभी नाम बदले
ज्ञान-बोध
सजा एक नये बसे घर-सा
तुम ने मुझे परसा

कटुता को
मान लिया
अपना हमजोली
ममता की वाणी में
नयी प्रीति घोली
काल-बोध
लगा मुझे मेहदी रचे कर-सा
तुम ने मुझे परसा

उलझ रहा हूँ

● गोवर्द्धन प्रसाद सिंह 'गवेषी'

मन से मन में उलझ रहा हूँ, कैसे अपने को सुलझाऊँ ?
अन्दर ही अन्दर जलता है आग का नहीं पता चलता है,
तन जलता है मन जलता है फिर भी ठंडा ही लगता है,
गुम सुम भीतर से रोते हैं ऊपर से कैसे मुस्काऊं ?
मन से मन में उलझ रहा हूँ कैसे अपनी आग बुझाऊँ ?
दर्द कहाँ सर दर्द कहाँ है ढूढ़ा इसको जहाँ-जहाँ है
वहीं-वहीं मैं खो जाता हूँ दर्द का नहीं पता पाता हूँ,
दर्द की दवा दर्द ही जाने बाहर-भीतर उसे लगाऊँ,
मन से मन में उलझ रहा हूँ कैसे अपने को सुलझाऊँ ?
गली कूंचि को देखो ठिकरी कितनी वेफिकरी होती है,
पराघात मानव का सह कर मस्ती में हँसती रहती है,
मैं हूँ ऐसा एक अभागा जो अपने को बुझा न पाऊँ,
पथ का पता नहीं चलता है आगे पग किस ओर बढ़ाऊँ ?
रात-रात भर जाग-जाग कर मन से बाहर भाग-भाग कर,
जब-जब ढूंढ़ा है शान्ति को देखा खड़ा वहीं क्रान्ति को,
सब तो उलझे हैं अपने में मदद लेने अब किसे बुलाऊँ ?
जो होगा सो होने दें अब यह निर्णय भी किसे सुनाऊँ ?
मन का भी पता नहीं चलता है आगे मन किस ओर बढ़ाऊँ ?

◉

सुधियों को सौगात

⊕ गोविन्द दीक्षित 'अचल'

पूनम वाला चन्दा लाया सुधियों की सौगात री।
सपनों की बारात सजाई-स्वप्निल नयनों की नगरी में।
प्रति विचारी बंधी हुई थी–अन चाहे दुःख की गठरी में।
मन था मति दे गया—केवल दर्द भरा आघात री।
पूनम वाला चन्दा लाया सुधियों की सौगात री।
अश्रु पुलिन का हार पिरोया, श्रास-पवन की डोरी में।
उर-वीणा का पचम-सरगम खोय मन की लोरी में।
बरसाने का श्याम भर गया नयनो में बरसात री।
पूनम वाला चन्दा लाया सुधियों की सौगात री।
स्मृतियों के महल ढह चुके—श्वांस वे सुधी गगन निहारे।
उर उपवन से शुष्क वरण मे प्रणय पुष्प झरते अंधियारे।
आया है मधुमास कि जैसे मरघट पर बारात री।
पूनम वाला चन्दा लाया शुधियों की सौगात री।

⊕

जीवन की कुछ घड़ियाँ विशेष

डा० गौरीशंकर सचान

भौतिक-विधान-हँस रहा और
कितना स्वप्रावस्थित मराल !
आधार-शिला से टकरा कर
काँपा मानस का अन्तराल !

दिन का होता देहावसान, रजनी में करता तम प्रवेश
जिनके प्रति पल-पल है महान् जीवन की कुछ घड़ियाँ विशेष

पूछा जगती पर आते ही
अधिकार हमारा कहाँ-कहाँ ?
जननी का बोला वरद हस्त
तुम जा सकते हो जहाँ-जहाँ !

खाना रोना व्यापार यही छू सका नहीं छल-छद्म-लेश
जिनके प्रति क्षण-क्षण हैं पवित्र, जीवन की कुछ घाड़ियाँ विशेष

"शैशव यौवन" औ "जरा-मृत्यु",
मेरी पुस्तक के पृष्ठ—कवर
मेरी सत्ता का कहाँ अन्त ?
मैं अविनाशी में अजर-अमर।

संसृति में मेरी गति असीम, मुझ से अगम्य है कौन देश ?
जिनके प्रति पग अधिकार पूर्ण, जीवन की कुछ घड़ियाँ विशेष ?

लेकर उठ बैठा अंगड़ाई
मच उठी विश्व-व्यापी हलचल
भू-पातों में तूफान प्रलय
थर-थर काँपा तारा मण्डल

हो गया पराजित महा-काल मैं स्वयं खड़ा हूँ काल-वेश
जिनका प्रति-पग है ध्वंस पूर्ण जीवन की कुछ घड़ियाँ विशेष

चाँद सा मुखड़ा

⊕ चकधर शर्मा

तुम्हें जब स्वप्न में पाया,
लगा तुम साथ बैठी हो ।
तुम्हारा चांद सा मुखड़ा,
निरखती मौन हो आंखें।

नयन सकेत सौरभ से,
हृदय में जा बसा पावन ।
सतत् कर स्मरण तुझको,
निरन्तर स्नेह पाया है ।

मिलन के दीर्घ क्षण छोटे,
विरह के एक क्षण युग है ।
हृदय के ताप को पाकर,
मिलन अरमान साधा है ।

रही छलती सयानी रात,
रूठी, जगरण क्षय हो ।
संजोये भाव तन मन से,
न तुम तक भेज पाया हूँ ।

तुम्हारी पीर पाने को,
कुचल अरमान बैठा हूँ ।
तुम्हें मैं अंक भरने को,
ढाये हाथ बैठा हूँ ।

न तुम तक वे पहुंच पाते,
न अपनाते छले जाते ।
तुम्हें जब स्वप्न में पाया,
लगा तुम साथ बैठी हो ।

गोपन की राधा

'चन्द्रभूषण'

वंशी में बांधो मत
मैं तो अनकथ्य किसी गोपन की राधा हूँ
झूलूंगी झूला
कदम्बों की डाल में
महलों में घेरो मत
मैं तो अनटूट किसी सर्जन की सीता हूँ
तपूंगी
पैठूंगी पाताल में
चित्रों में आंको मत
मैं तो अनदेख किसी अर्पण की संज्ञा हूँ
चम्पा हूँ डलियाँ में
दियरा हूँ थाल में

नवयुग की नई फसल

⊕ चन्द्रमोहन "हिमकर"

हरे भरे खेतों में लहराती फसलें धान की।
राम किसानों में रमता खेतों में हँसती जानकी ।।

जितनी भी वजर मरु भूमि, भारत में बेकार है।
अब अगणित नहरों के द्वारा, सिंचने को तैयार है ।।
पड़त पहाड़ी विधवा भूमि पर, सुहाग फिर लहरायेगा।
युग-युग से प्यासी भूमि का, यौवन अब हँस कर गायेगा।।
भारत माता स्वर्ग बनेगी, बात नहीं अभिमान की,
हरे भरे खेतों में अब लहराती फसलें धानकी।
राम किसानों में रमता, खेतों मे हंसती जानकी ।।

हरे हरे पौधो के सिर पर, पीले पीले फूल हैं।
फल फूलों से लदे बगीचे, मौसम भी अनुकूल हैं ।।
कदम कदम पर रिद्ध सिद्धि, धन दौलत के अम्बार लगे।
घर घर देखो द्वार द्वार सुख मगल वन्दन वार सजे ।।
भौतिक उन्नति सग जग रही जीवन ज्योति ज्ञानकी,
हरे भरे खेतो मे अब लहराती फसलें धानकी।
राम किसानो मे रमता खेतो मे रमती जानकी ।।

दूर-दूर विस्तृत खेतों मे, पकी फसल लहराती है।
देख फली फूली खेती को, जनता हंसती गाती है।
इठलाता ये धान, चना हसता, गेहू खाता है।
हरियाली सग ज्वार बाजरा, गाता है मुस्काता है ।।
अलमस्त किसानो की टोली, खेले गज घोडा पालकी।
हरे भरे खेतो मे अब, लहराती फसलें धानकी।
राम किसनों मे रमता, खेतों मे हंसती जानकी ।।

पीले चावल द्वार पर

चन्द्रसेन 'विराट'

छोड़ गया है समय तुम्हारा मेरा नाम पुकार कर
पीले चावल द्वार पर

सुमुखे ! उठो सवारो कुंतल आंगन लीप गयी है धूप
मांड गया रांगोली ऋतुपति आज कल्पना के अनुरूप
उत्सव की अब करो व्यवस्था यौवन के त्यौहार पर
वय के वंदनवार पर
पीले चावल द्वार पर

सुमुखे ! राजहंस अवसर का कंवल पत्र पठाता एक
शोणितसे लिख शपथ-पत्र तुम करो मोतियों से अभिषेक
लौट अनाहत मत जाने दो क्षण के पंख पसार कर
अपना गेह विसार कर
पीले चावल द्वार पर

सुमुखे ! अब हस्ताक्षर कर दो छोड़ो भी अंतर का द्वंद्व
विद्रोही घोषणा बने यह संबंधों वाला अनुबन्ध
हलदी-भरी हथेली थापो परम्परा अनुदार पर
नियमों की दीवार पर
पीले चावल द्वार पर

सुमुखे ! मैं हथकड़ियां तोड़ूं वल दो मुझे कलाई थाम
न्यायाधीश विवेक हमारा उसे कृतज्ञतापूर्ण प्रणाम
उत्तरीय पहनो विवाह का चीवर जीर्ण उतार कर
तन मन के संस्कार पर
पीले चावल द्वार पर।

वसन्त आगमन–एक अनुमति

⊕ चन्द्रेश 'शोला'

फिर से;
खिले हैं— सुर्ख टेसू !
और······'
वासन्ती बयार;
मादक मस्त सुगन्ध लिए;
उड़ने लगी है;
तो—
ऐसे लगता है;

कि
तुमने
फिर से
बिखराये है
अपने
स्याह गेसू

अति विचित्र है यह संसार।

⊕ चतुर्भुज सिंह 'भ्रमर'

नित उलझन मय है ससार !
न मिलता इसका पारावार !
कही आमोद प्रमोद विहार !
कही है क्रन्दन हा-हाकार !
नही पा सकता कोई पार !
नियति का निर्मम नियम अपार !
पड़ी जीवन नैया मझधार !
संस्कृति- सागर विषम अपार !
खुले हृत्पट होकर साकार !
समझ में आता तब ससार !
अति विचित्र है यह ससार !

दीपक

● चाँदमल अग्रवाल 'चन्द्र'

देह मिट्टी की, भरा उसमें लबालब—
स्नेह निर्मल, प्राण-बाती जला जब
ज्योति देता तो प्रकाशित कक्ष होता,
तब मनः स्थिति का किसे होता पता कब ?

काम तब जलकर सहास प्रकाश देना,
फिर उलहना क्या किसी को खास देना।
देख रह जाये न त्रुटि कर्तव्य में कुछ,
मत किसी को उर-जलन-आभास देना।

मौन जलता रह न हो जब तक सवेरा,
मेट तम पथ का भले हो वह घनेरा।
कर न चिंता विषम तम घेरे तुझे औ—
जग कहे–'दीपक तले रहता अन्धेरा'।

तम असीम असीम 'चन्द्र'-प्रकाश भी है,
जग पहेली-ह्रास, नाश, विकास भी है।
तम मिटाने दूसरों का भस्म हो खुद,
औ बतादे यों तपन में हास भी है।

●

मगर प्यार का दीप जलता रहा है

⊕ मुरली मनोहर

पवन हर डगर पर मचलता रहा है,
मगर प्यार का दीप जलता रहा है॥

सुहानी निशा, दिन सुहाना सुहाना,
मगर अब कहाँ तुम, कहाँ वह जमाना।
बस अब याद हीं रहगई है तुम्हारी,
इसी खेल में मन बहलता रहा है॥

पवन हर डगर पर—

२

बदलती रही है समय की कहानी,
कथा हो चुकी है बहुत ही पुरानी।
न अब तुम वही हो न अब हम वही है,
जमाना सभी का बदलता रहा है॥

पवन हर डगर—

: — :

उषःकाल

⊕ छन्दराज

बजे कितने ? चार, उजली सी क्या वस्तु ?
ओस की कतार; टप टप का शब्द क्यों ?
क्या बरसे ?
बरसे ना झरे हर सिंगार, सोमनीय सुदृश्य।
फूल बेतरह पड़े पथार।

बिना चाँदनी का चाँद

● चम्पालाल सिंघई 'पुरंदर'

चाँद तो रह गया, चाँदनी छिप गई।

मग सुगम या कि दुर्गम न परवाह थी,
साथ मे तुम रहो, वस यही चाह थी
वात की वात में कट गई राह थी,
आज लगता अँधेरा अधिक है मुझे,
निराशा की बदली है छाई नई।

फूल ही फूल पथ में रहे तव खिले,
शूल भी फूल वन मार्ग में तव मिले,
संग में सहचरी, प्राण क्योंकर हिले,
छोड़ कर हाथ मेरा कि मँझधार में,
देखता मैं रहा पार तू हो गई।

वैरिन सांझ

● छविनाथ मिश्र 'पागल'

पीपल की टहनी से अँधियारा लटका है
आंगन में उतर रही है वैरिन सांझ
कंगन के स्वर उभरे, सपने कुछ खनक गये
ड्योढ़ी के आस-पास धुंधले क्षण ठुनक गये
तालों के मुंह पर कुछ उजियारा छिटका है
दरपन में संवर रही है सौतिन सांझ
कुंठा की एक लहर अगवारे दौड़ गयी
केंचुल-सी याद-किरण पिछवारे छोड़ गयी
पोर-पोर वांसों का वेचारा चिटका है
कानन में पसर रही है नागिन सांझ
धीरे से वंजारिन वंशी कुछ वोल गयी
आर-पार पीड़ा की वनहंसी डोल गयी
नाता तो जीवन का प्यार से निकट का है
पल-छिन में मुकर रही है वांझिन सांझ

प्यार

⊕ जगदीश सक्सेना

प्यार—
दृष्टि—विभ्रम है।
निगाह जहाँ जाती है;
मंजिल नजर आती है;
पर न कुछ पाती है—
रेत हाथ आती है।

●

प्रश्न और उत्तर : एक संभाव्य समीकरण

⊕ ज्योति प्रकाश सक्सेना

प्रश्न है :
डूबा सितारा क्यों
प्रश्न है .
मुझको निहारा क्यों,
और उत्तर !
मौन।
क्योंकि ऐसे प्रश्न का
उत्तर नहीं होता,
क्योंकि ऐसे प्रश्न का उत्तर
स्वयं ही प्रश्न होता।

कौन वह आया

⊕ जगतप्रकाश माथुर

हमें चिर घोर निद्रा से जगाने कौन वह आया ?
मिटाने क्लेश औ क्रन्दन,
जगत के कटु कुटिल बन्धन,
मनुज का मनुज पर शासन,
मनुज द्वारा मनुज शोषण !
सुखदतम साम्य का सरगम सुनाने कौन वह आया ?
हमें चिर घोर निद्रा से जगाने कौन वह आया ?
जगा शोषित मजदूरों को,
जगा पीड़ित किसानों को,
दुखी औ दीन दलितों को
जगा मुर्दा जवानों को,
अधमतम धूलि-कण को जगमगाने कौन वह आया ?
हमें चिर घोर निद्रा से जगाने कौन वह आया ?
बुझा कर व्यर्थ की चाहें,
भुला कर भूल की राहें,
मिटा कर वेदना-आहें,
जगा कर भव्य आशाएँ,
दनुज से मनुज यों हमको बनाने कौन वह आया ?
हमें चिर घोर निद्रा से जगाने कौन वह आया ?
लिये नव आग शब्दों में,
लिये नव राग छन्दों में,
नया अनुराग भावों में,
दिये नव त्याग प्राणों में,
अमरता का अनोखा पथ बताने कौन वह आया ?
हमें चिर घोर निद्रा से जगाने कौन वह आया ?

तुम्हारी झील का शील

⊕ जयगोविन्द सहाय

बहुत दिन हुए तुम्हारी ओर से गुजरा था,
देखी थी तुम्हारी झील,
डूबना चाहा था,
कि सद्यः,—
निरख तुम्हारी झील का शील
ठिठक गए थे पाँव,
याद आया था गाँव'
—मात्र एक पल ठहरा था;
बहुत दिन हुए तुम्हारी ओर से (भी)
गुजरा था……।

अन्तर-ध्वनि

⊕ जनार्दन राय

तुम्हारे दो नैन
नैन के दो बैन
बड़े लगते है।
तापस हिम पर्वत सा
ढुलका देते दो दाने,
दानों पर अंकित रहता है
अघकहे, अनबुझे गाने
और वहाँ मानसरोवर झील
नीली, स्वेत वमना सी
तैरते और छोर पर दो हंस
उगती कोमल कपन करुणा सी।

लहर और तट

जयप्रकाश यादव

लहर——

हर गति किरण में जागो,
शरतु के देर-विरहित आत्मा की,
लचक कर फेर कर ग्रीवा,
ज्यों मोड़े पंख खंजन ने,
अधूरी छवि स्व-छाया की
जरा रुक कर, कुमुद-दृग-कोरकों में भर,
उभक कर गीत गाती,
श्रौर वढ़ जाती, हँसी में फूट पड़ती,
और फूले काँस तीरों पर।
छिपाये लहर के श्रावेग,
जब जैसे उठे हों,
विचारों में निकलते तीर,
ऊपर श्रा रहे है।
हवा को रोक लेते,
जोर से वहने न देते,
उड़ाकर रेत जिसमें ढँक न पाये,
स्मृति स्पन्दन को;
श्रौर वह भी क्या उड़ायेगी उन्हें,
स्वयं वन जाती कि जैसे वे वने।
वाँह तट की—
सित-विहग-श्रंकुर-सुमन-शैवाल वाली,
विम्व उसका,
स्वच्छ नीली श्रौर गहरी छाँह में नभ की,
साफ उगता श्रा रहा ज्यों श्रात्मा ही हो मिलन की,
वस्तु से भी सत्य हो ज्यों रूप-श्री उसकी।

मगर, तुम न आये

❁ जवाहर चौरसिया 'तरुण'

सपनों की सूखी फुलवारी, निरख-निरख कर राह तुम्हारी,
नयना पथराये ! प्राणधन ! मगर तुम न आये।

तुझ बिन बीत रहा ओ निष्ठुर, पल पल कल्प समान रे।
तड़प रहे प्राणों के पन्छी, सिसक रहे अरमान रे ॥
रटना लगा रहे तेरी ही, मीत प्रीत के गीत रे।
जनम-जनम के सगी आ जा, गागर जाय न रीत रे ॥
विश्वासों की साँस सिसकती, उर में जैसे फाँस कसकती,
प्राण तिलमिलाये-चैन दिन रैन न मन पाये—
प्राणधन ! मगर तुम न आये ॥

कड़क रही पीड़ा की बदली, मन के देहरी-द्वार पर,
तड़प रही विरहा की बिजली, सपनों के श्रृंगार पर।
काजल छलके, मोती ढलके, कलपे मन दिन रात है।
धधके जीवन प्राण जिसे छू, यह कैसी बरसात रे ॥
अभिलाषा की बगिया उजड़े, नयन-नीर की नदिया उमड़े,
मन डूबा जाये,—पीर का सागर लहराये—
प्राणधन, मगर तुम न आये ॥

सुरभि सुमन में, धड़कन तन में, ज्योंकि पवन है साँस में—
त्यों तेरी सुधि-बाती बलती मेरे प्राण प्रकाश में।
डूबी उभरी बहुत बार तेरे सुधि-सिन्धु अथाह में,
अब तो आ जा, दुल्हिन खड़ी है, दूर देश की राह में।
सांसों की बारात पुकारे, सुधियों की सौगात पुकारे,
आ जा मन भाये, प्राण-डोला उठता जाये,
प्राणधन, मगर तुम न आये ॥

आँसू की गंगा में

⊕ जयजयराम शर्मा 'व्याकुल'

जब जब आँसू की गंगा में
मैंने है मनकी नाव निकाली
मोह-भँवर में तब-तब तृष्णा
ने चेतन पतवार चुराली
राह दिवस के पथ पर ही
पथिकों को रितुओं ने लूटा
भर उम्र किसी के ख्यालों ने
रंगीन जमाने को लूटा
है कौन अछूता भूतल पर
अनबूझी आग वह कौन यहाँ
रोना हँसना यह काल कर्म
मरने जीने का मंच जहाँ
मनकी बगिया में मधुर बीन
अपनी लहरी पर इतराई
चिन्ता सांपिन तब-तब:
विवेक का, चक्षु काटने को आई।

○

दरक गया मन का दर्पण

⊕ जसविन्द्र 'अशान्त'

दरक गया मन का दर्पण, टूट गई परछाइयाँ।
मेरे खंडित वर्तमान ने
तोड़ दिया मेरा अतीत भी।
कटुताओं ने कटु कर डाला
मधु में डूबा मधुर गीत भी।
जाने आज हुआ क्या ऐसा,
पहले नहीं हुआ था जैसा,
विलख उठा मन का गुंजन, रूठ गईं शहनाइयाँ।
बदल गए सुर सब वीणा के
सरगम तड़प-तड़प उठता है।
सोच रहा, क्या हाथ समझके—
ऐसे ही कोई लुटता है?
साथ सिर्फ रह गई उदासी,
या, फिर एक गगरिया प्यासी,
सम्भाले सागर सा मन, अनमापी गहराइयाँ।
पतझर इतना अन्यायी था
विधवा सब हो गईं बहारें।
पास नहीं है हृदय समय के
सुनता वह कब करुण पुकारें?
झरे पुष्प-पत्ते शाखों से,
देख रहा सूनी आंखों से—
उजड़ा सा जीवन उपवन, सिसक रही अंगड़ाइयाँ।
दरक गया मन का दर्पण, टूट गई परछाइयाँ

आज तुम हो दूर

⊕ जितेन्द्रकुमार 'जिन्नु'

आज तुम हो दूर फिर भी
प्रीत मेरी पल रही है।

मैं भटकता आ गया हूँ
इस मरुस्थल के किनारे
खोज भी प्रिय को न पाया
डगमगाते चरण हारे,
फूल सी कोमल जवानी
बे सहारे ढल रही है ॥

मैं बढ़ा संघर्ष में भी
कब डरा तूफान से,
फूल के चूमे चरण पर—
कब दिया दिल मान से;
बिन तुम्हारे प्राण प्यारे
देह हिमानी गल रही है ॥

दूर तुम से आज इतनी
चाँद से भोली चकोरी,
पास भी हूँ मैं तुम्हारे
श्याम घन में सांध्य गोरी
मौन तुम हो लाजवती
पर कहानी चल रही है ॥

—

मनुष्य की परिभाषा

© प्रो० जितेन्द्र प्रसाद सिंह

मनुष्य तुम भविष्य हो मनुष्य के। मनुष्य तुम पुकार हो मनुष्य की।
स्वर्ग की मरीचिका नहीं रही,
नर्क की विभीषिका नहीं रही।
खोज लो, निकाल लो, हृदय-रतन,
हर पलक तुम्हें मिली, संवार लो।
गीत का दिया जला, दिया जला।
मनुष्य हो दिया तुम्हीं, शलभ तुम्हीं।
मनुष्य तुम विकास हो विनाश के,
मनुष्य तुम भविष्य हो, भविष्य के।

मेरे सपन

© जीवन प्रकाश जोशी

तुम मेरे सपने सच करदो।
शूल हटें मेरी चितवन से
फूल झरें मेरी चितवन से
घोर अँधेरे की घड़ियों में
मन को जलता दीपक कर दो। तुम मेरे......
प्रात किरन सी बन मुसकाऊ
माया मुग्ध सन्देश जगाऊं
मेरी आँखों की अंजलि में
मानव की सब पीड़ा भर दो। तुम मेरे......
सुधा भरी बदली सी बरसूं
जग भर में पूनम सी चमकूं
मेरी वाणी की वीणा की
मधुमय जीवन की लय करदो। तुम मेरे......

न छेड़ो हृदय को

● कु० जीवन्ती बिष्ट

मुझे आज चहुं ओर हर्ष है मनाना,
सरसता की मधुर पलकें पास आ रही हैं।
उन पलकों को पाने को व्याकुल है वे जो,
ऐसे समय में कोई पास न आता,
न छोडो हृदय को, भाग्यहीन तराना
अवनि मंडल में घिरा था जब पूर्ण अंधेरा
अब प्रकाश है कभी था रजनी का घेरा,
अब बीते क्षणों को कोई याद न दिलाना
न छेड़ो हृदय को जिसे अब है पाना,
नयी दिन रात नूतन युग पद हो रहे हैं,
भाग्य देता साथ जहां चलता आ रहा है
सावन की यह धरती प्रसन्न दिख रही है,
सध्या का यह गगन भी हँसता दिख रहा है,
इन खुशियों के मध्य दुख भरी आँखों से,
न छेड़ो हृदय को तुम निराश तारो,
सागर की लहरों मे स्वय बह रही हूं,
तट की नीखता को स्वय ही देख रही हूं,
न छेड़ो हृदय को ये बरसा के पानी,
पवन चल रहा है सुगन्धित निराला,
पुष्प जो खिले हैं अनूठी अदा से,
धरा आसमा मे जिधर आंख फेरे,
लगते सभी मोहक अपनी छटा से,
न मालुम कहां से मैं सुनती रही हूँ,
न छेड़ो हमको अब उषा आ रही है।

अन्तिम क्षण

⊕ जुगलमोहन दीक्षित

दीपक हूं मैं,
सोचता हूं नीरस,
जीवन की राह.......
खत्म हुआ चाहती।
जीवन की राह ने,
या राह जो जीवन ने,
या दोनों को तटस्थ समय ने,
खत्म किया है,
न मैंने समझा,
न मैंने देखा,
हूँ चाहता देखना।
मैं दीपक हूँ,
भभक रहा,
एक वार,
बुझने से पहले ॥

शाम के भूले

⊕ ठाकुर प्रसाद सिंह

शाम के भूले सुबह घर लौट आओ
जिन्दगी भर के लिए बस एक भूली शाम
काफी है।
शाम के भूले सुबह, आओ न आओ!

—

बात नही बनती है

● प्रो० तपेश चतुर्वेदी

मिलने को नयन-नयन रोज मिला करते हैं
मन से मन मिले बिना बात नही बनती है

बाहर का रूपरंग निर्मोही छलिया सा
भोली निंदियारी का चैन छीन लेता है
दुनिया बहलाती है शीशे के टुकड़ो से
हृदय के हीरे को कौन यहा देता है

यों तो हर बगिया मे भवरो का मेला है
फूलो के खिले बिना बात नही बनती है

माना कुछ राहे आसान बहुत होती हैं
पाव बिना पथी की दूरी घट जाती है
लेकिन कुछ ऐसी लाचारी है जीवन की
बाजी के चलते ही गोटी पिट जाती है

कभी-कभी मजिल ही पास चली आती है
लेकिन खुद चले बिना बात नही बनती है

आसू जो पीड़ा से गठबन्धन करते हैं
मधुर-मधुर गीतो को जनम दिया करते हैं
निष्ठुर इस जग की यह रीति चली आई है
अमरित जो देते हैं गरल पिया करते हैं

दीपक के पास शलभ प्यार लिए आते हैं
लेकिन कुछ जले बिना बात नहीं बनती है

चू पड़ा महुआ

⊕ तीर्थराज झा

चू पड़ा महुआ।

मलय की साड़ी सटकती,
हर कली की कटि लचकती,
हर पवन-वाला भटकती,
नहीं किसके दिल खटकती—

यह जवानी दुआ।

हर नयन-गति में ठसक है,
आज हर चोली मसक है,
हर जगह बोली कसक है,
हर कली भोली चसक है—

श्रवित रेखा सुआ।

उड़ पड़ा वह पुष्प-केसर,
जग पड़ा हर भौंर का घर,
द्रवित नासा श्रवित बिम्बा,
हिल उठी है नाव-बेसर

धन्य है अगुआ।

o

दूर अभी है

⊖ द्वारिका प्रसाद त्रिपाठी

नीरवता ने लिया बसेरा।
थक कर सोई याद किसी की
आकुल नयन रात भर रोये
मन कुछ भ्रमित हुआ है ऐसा
चलते चलते पथ ज्यों खोये
मंजिल का अनुमान नहीं है
दूर अभी है बहुत सवेरा।
सूना सूना मन का मन्दिर
ज्यों पक्षी उड गया नीड़ से
ऐसी स्थिति हुई हृदय की
ज्यों निर्जन वन गया भीड से
किसे उलहना दूँ मैं बोलो
एकाकीपन साथी मेरा।
पर्वत के सीने में लिपटी
जीवन लम्बी खोह बन गया
दूर हो गए हो तुम जबसे
अपने मन का मोह छिन गया
अब मैं किसका रूप सवारू
सब शृंगार अधूरा मेरा।
किससे कहूँ व्यथा यौवन की
सांसें बोझ बन गयीं तन की
सूख गई सारी हरियाली
रूठ गयी सौरभ मधुबन की
फिर भी जाने क्यों रह रह कर
बचपन देता रहता फेरा।

काव्य में तुमको उतारा

● दामोदरस्वरूप 'विद्रोही'

था सरल वरदान तुमसे पा सकूँ मैं,
किन्तु मेरी अर्चना में ही कमी थी।
मैं मनुज होकर अचेतन था यहाँ पर,
तब तुम्हीं ने चेतना की बाँह दी थी।
जल रहा था मैं 'अहम्' की आग में जब,
तब तुम्हीं ने प्यार की मृदु छाँह दी थी।
प्यार के उस रूप को मन में बसाकर
काश, मैं अपने हृदय को पूज पाता
तो यही संसार लगता स्वर्ग मुझको,
किन्तु मेरी वन्दना में ही कमी थी।
शक्ति कितनी क्या कहूँ जब कुछ हवा से—
चल रही मिट्टी यहाँ इन्सान बनकर।
वह तुम्हारी तो सहज अनुभूति ही थी,
पुज रहा तुलसी यहीं भगवान बनकर।
भावना आई सिमट करके कला में
लेखनी ने काव्य में तुमको उतारा
था तुम्हारा रूप मेरे भी हृदय में,
किन्तु मेरी सर्जना में ही कमी थी।
मैं तुम्हारे द्वार का लौटा पथिक हूँ,
है मुझे पहचान प्रियतम के सदन की।
याद तुमको हो कि मैं आता नहीं था
याद हो शायद तुम्हें मेरे सदन की।
याद मुझको है मगर तुमने कहा था—
"प्यार इतना तो भुला जाकर वहाँ से"
तुम यहाँ आते स्वयं इन्सान बनकर,
किन्तु मेरी साधना में ही कमी थी॥

आज़ादी प्यारी

दिनेश चन्द 'अरुण'

आजादी प्यारी, भारत प्यारा है,
कोटि कोटि नयनों का एक सितारा है।
हम से जो भी टकराया वह धूल बन गया,
प्रेम किया जिस कांटें ने, वह फूल बन गया।
हम सत्य अहिंसा, और प्रेम के रखवारे,
चरणों में झुक गया, शत्रु, वह बंधु बन गया।
मानवता का साथ निभाने वाले हम,
गांधी, नेहरू का देश दुलारा है।
फिर एक बार इतिहासों के पन्ने पलटाओ,
हम जीवन अपना रखते हैं, शमशीरों पर।
विश्वास न हो तो आओ हमसे टकराओ,
हम फूल खिलाते चलते हैं, अंगारों पर।
दानवता का मर्दन करने वाले हम,
सत्य अहिंसा प्रेम हमें प्यारा है।
नीच दृष्टि, नापाक इरादे नहीं चलेंगे,
तपोभूमि यह, राम, कृष्ण गौतम गांधी की,
नेहरू, भारत, सुभाष, शास्त्री, यहीं के,
गुण गाते हैं, कण कण जिनके कार्यों की।
शांति प्रेम की नीति, हमारे देश की,
बेजोड़ विश्व में, नाम हमारा है।
अगर हिमालय ने हुंका गल जाओगे,
भूमि हड़पने की कोशिश का फल पाओगे।
नेत्र तीसरा जब खोलेगें शिवशंकर—
कदम बढ़ाया तो, तत्क्षण ही जल जाओगे।
दौड़ा आया, शेष नाग, की शैया वाला,
भारत मां ने, जब-जब उसे पुकारा है।

गोपन की राधा

⊕ श्री दीप्ति खण्डेलवाल

तेरे फूल तुझी को अर्पण मैं तो केवल उडी सुरभि हूँ।
एक मदिर झोंके से उड़कर अनायास लहरा आई हूँ
एक याद धुंधली सी दे दी विदा माँगने अब आई हूँ
मेरा क्या मैं तो झोंका हूँ कुछ तीखा सा कुछ मादक सा
तेरे फूल तुझी को अर्पण मैं तो केवल उडी सुरभि हूँ।
यह सम्बन्ध तुम्हारा मेरा जैसे यह काया वह छाया
काया बिना न छाया सम्भव छाया तो पर केवल छाया
आदि और इति की तुम जानो मुझको केवल वह लेने दो
ओ अनन्त वारिधि के स्वामी। मैं तो केवल एक लहर हूँ।
रूप रग रस रस गध भरा यह जग जीवन कैसी छलना है
मेरे प्राणों की बाजी को दोनों छोरों से जलना है
मुक्ति और गति की तुम जानो मुझको केवल जी लेने दो
ज्योति-पुंज हे! तुमसे बिछुडी मैं तो केवल एक किरण हूँ।
तुम ही तो वह मीत अपरिचित सांस-सास में अनुकृति जिसकी
तुमही हो वहगीत सुपरिचित अधर-प्राण मे झंकृति जिसकी
कभी न देखा तुमको फिर भी प्रतिक्षण तुमको छू लेता है
रात और दिन की तुम जानो मैं तो केवल एक सपन हूँ।

नई नई बातें होनें दो

⊕ दुर्गा प्रसाद 'दुर्गेश'

नयी जवानी, नई तरंगें, नयी नयी बातें होने दो :
प्रिय तेरा श्रंगार अनोखा दमक रही माथे पर बिंदिया;
रत्न जटित आभूषण लखकर, विदा हो गई मेरी निंदिया,
मैंने दिया इशारा उसको, अरी सुहागिन कुछ तो बोलो,
और झपी सी पलकों को, अंगड़ाई ले धीरे से खोलो,
प्यार भरी सजनी रजनी में प्यार भरी बातें होने दो :
नयी जवानी नयी तरंगें, नयी नयी बातें होने दो।

चन्दा लख कर यदि शरमाये, तो शरमाये लुक जाने दो,
और चांदनी भी शरमाये, तो शरमा कर छुप जाने दो,
तारागण से बात न करना, मनुहारी का मान जायेगा,
मुस्काये अधरों को लख कर, खिचता मेरा प्यार जायेगा,
रूप रुपहली और छवि वाली रूप निहार मुग्ध होने दो।
नयी जवानी, नयी तरंगे, नयी नयी बातें होने दो।

गोरी गोरी बाहों से तुम, नहीं चूड़ियों को खनकाओ,
खनक-खनक की प्रतिध्वनि होगी, सोई दुनिया नहीं जगाओ,
ये कजरारे नयन तुम्हारे, खंजन को भी मात कर गये,
हृदय भेद कर आज हमारा, मानो पक्ष्याघात कर गये,
तिमिर देख कर ऊब न जाना, रस कपोल चुम्बन होने दो।
नयी जवानी नयी तरंगे, नयी नयी बातें होने दो।

चाल तुम्हारी मतवाली सी, लख मरल भी शरमाया है,
रूप रंग से ओतप्रोत प्रिय, सुन्दर सुघड़ तुम्हें पाया है;
उभरे हुये उरोज तुम्हारे, लख कर प्रेम उमढ़ आया है,
तृप्त करूंगा मनोकामना, कंचन सी लगती काया है,
प्रेम अमर दुर्गेश हमारा, सुख से जियो और जीने दो।
नयी जवानी, नयी उमंगें नयी नयी बातें होने दो।

लोचन किसकी बाट निहारें

⊕ देवकी साजन

आँख न झपके किसकी धुन में
किसकी प्रतिमा उतरी मन में
नयन सजाये किसकी खातिर,
किसकी खातिर केश संवारे।
लोचन किसकी बाट निहारें ॥

कौन बना युग युग का साकी
किसने तुझको प्रीत सिखा दी
बोलो, खोलो, अधर न जोड़ो,
किसको प्रिय कह सांस पुकारे।
लोचन किसकी बाट निहारे ॥

मन की तेरी मांग संदूरा
सिर की फिर क्यों मांग अधूरी
भूल गये क्या साजन तुझको,
दीप बुझे जो घर के सारे।
लोचन किसकी बाट निहारें ॥

—

नयन दीप

देवीप्रसाद 'राही'

कल किसी का नयन दीप रोता रहा।

मूक था ये गगन, मूक थी यह निशा
सुन रही थी हँसी, आँसुओं की कथा,
देवता बन किया व्यंग पाषाण ने—
जब मनुज सुन न पाया, मनुज की व्यथा,

थर-थराती रही लौ तिमिर अंक में—
मुस्करा कर शलभ, राख होता रहा।

तारकोली निशा ले अँधेरा उधर
हँस रहा था खड़ा चाँद की लाज पर,
अनमनी, अधजली व्योम की रश्मियों
छिप गई जा क्षितिज में, कहीं भाग कर,

पर धरा-मोहिनी की किरन बीन पर—
नाश में भी सृजन गीत होता रहा।

कौन ऐसा हुआ आज तक विश्व में
अश्रु औ' हास से जो न परिचित हुआ?
किन्तु अचरज तुम्हारे बिना आज तक—
हास मेरा किसी क्षण न मुखरित हुआ,

अश्रु में डूब कर भी मगर मैं सदा—
विश्व में प्यार का बीज बोता रहा॥

उत्सव नहीं है

⊕ देवी प्रसाद वर्मा 'बच्चू'

प्राण में उत्सव नही है
विष नहीं आसव नही है
व्यर्थ चलता ही रहा हूँ
व्यर्थ जलता ही रहा हूँ
याद में तेरी जवानी
सदा छलता ही रहूँगा
किन्तु तुमको भूल जाना
आमरण संभव नहीं है।

तार सारे टूट जाएँ
पर नहीं परवाह इसकी
मैं लुटा हूँ साज सारे
है नहीं परवाह इसकी
दे सके आश्रय मुझे जो
शेष वह है छोर किसकी
प्राण में गुंजन निहित पर
ओंठ पर आसव नही है।

मेंहदी तुमने रचाई
किन्तु वह लाली नही है
मधु हुआ निःशेष मधुकर
के अधर खाली नही है
इस चमन में है जवानी
किन्तु वह माली नहीं है
नीड़ निर्मित हो चुका पर
प्राण का कलरव नहीं है।

प्यास सदा अमृत जल पीती

⊕ ध्वंसावशेष त्रिपाठी,

आँसू वहते साँझ सकारे, पीर मिली है तेरे द्वारे—
हमें न जाना छोड़, याद के चुभते काँटे सह न सकेंगे।

इन अधरों पर मुस्कान देख, हर मास यहाँ मधुमास रहेगा,
गीत उड़ेंगे पंछी वनकर, मनचाहा यदि आकाश मिलेगा,
मकरन्द चूसने आयेगा जवभी यहाँ मिलिन्दों का वेटा—
शायद किसी कमल के भीतर, उसका तव आवास रहेगा,

तुझे हमारा प्यार पुकारे, मन भी अपना राज उघारे—
मत हमसे रिश्ता तोड़ कि साजन तुम विन रह न सकेंगे !

तृप्ति यहाँ वेहोश पड़ी, पर प्यास सदा अमृत जल पीती,
मंजिल छूने की कोशिश में, आज विवशता हमसे जीती,
नेह वढ़ाकर तुझसे हम तो, जीवन में आग लगा वैठे—
वरदान नहीं मिल पाया तुझसे, स्नेह गगरिया ऐसी रीती,

ओ मेरे मन के राज दुलारे, हम आज खेल में तुझसे हारे—
मत यहाँ आंधियाँ छोड़ कि मेरे गढ़ सपनों के ढह न सकेंगे !

—

शब्द तुमने रचे ।

⊕ डॉ० धर्मवीर भारती

जैसी मेंहदी रची
जैसे बेंदी रची
शब्द तुमने रचे

'प्रेम अक्षर थे ये दो
अनर्थ के :
अर्थ तुमने दिया ।

'मैं' यह जो ध्वनि थी
अन्ध बर्बर गुफाओं की
अपने को भर कर
उसे नूतन अस्तित्व दिया ।

बाहों के घेरे
ज्यों मंडप के फेरे ।
ममता के स्वर
जैसे वेदी के मंत्र गुंजरित मुंह अंधेरे

शब्द तुमने रचे
जैसे प्रलयंकर लहरों पर
अक्षयवट का एक
पत्ता बचे
शब्द तुमने रचे ।

—

मैं अधर को आंसुओं के जाम दे दूँ

● नन्दकिशोर कावश 'किशोर

जिन्दगी की राह चलते थक गया हूँ,
सांस को कुछ मौन का विश्राम दे दूँ।

मैं जरा भी राह का हामी नहीं था,
खूब भटकाया तुम्हीं ने दे सहारा;
जब कभी भी कंटकों में डगमगाया—
आस झाड़ू से तुम्हीं ने पथ बुहारा,
डेढ़ गज मरघट जरा तुम साफ करदो,
मैं कफन औ, लकड़ियों के दाम दे दूँ।

उम्र की कुछ चाह भी मुझको नहीं थी,
सुन नहीं पाया किसे कहते जवानी।
हाँ रुदन की महफिलें तो बहुत देखीं,
आंख की मैं सुन चुका गीली कहानी।
तुम हृदय की प्यालियाँ कुछ थाम लेना,
मैं अधर को आंसुओं के जाम दे दूँ।

मौत ने कुछ कफन बांटे बस्तियों में,
कुछ चिता से लकड़ियां मैं खींच लूँगा,
जिन्दगी में मिल न पाई दो गजी भी—
आज कुछ लज्जा वसन से तन ढकूंगा।
तुम जरा सा आँख का शीशा दिखाना,
हड्डियों को कुछ सुनहला नाम दे दूँ।

सोचता हूँ फिर चिता यदि जल न पाई,
मरघटों का शून्य आकर छीन लेगा—
अधजला दिल इस लिये मैं दान कर दूँ।
तुम जरा गंगाजली का मुंह झुकाना,
मैं सुबह के हाथ अपनी शाम दे दूँ।

आँख छलछलाई

⊕ नरेन्द्र

एक आँख छलछलाई……
बदबू—बेबदबू के नगर में तैरता
नीलम आंखों का एकाकीपन
गुनगुने पानी नहाई झील में
हाथ, पांव मारता पकड़ने को मन

फटे दूध चान्दनी का हाल बेहाल
जिन्दगी बेच सोया, प्यार
आओ दौड़ कर तारों के कगूरे गिरादें
शायद कुछ शान्त हो हमारा तपता तन

बासी सड़ी, गली, मैली धूप की हँसी
शून्यता के गलियारों में भटकते कदम
पुराने टूटे खडहर म्यूजयम से चाहता चुगना
कोई अपना खोया पुराना नया एकाकीपन

बेबस सी रात उतरी खाली हाथी पर
सिर पोट लिये अपने मन के
शून्य मे बने वट वृक्ष तले पले सभी सपने
अभी, बिलकुल अभी टूटे हैं।

एक आँख छलछलाई है
जंगल कांस सी आरती हुई उन्मन।

—

जियो

नरेन्द्र शर्मा

जियो, जी भर जियो
अमर-जीवन-कामना में अमृत ही मत पियो
जियो, जी भर जियो

यदि अमृत जग में कहीं, तो है न वह सुर-तरु-चरण में
स्वेद में है, रक्त में है, अश्रु में, जीवन-मरण में
पंचरंगी प्राण-जल की क्षण-चपल मछलियो
जियो, जी भर जियो

मीन का क्या हित करेगा अमृत ? उस का सत्व पानी
अनुभवों के मध्य जीवन, अनुभवी ही तत्व-ज्ञानी
तीर-वासी मीन बनो मत, लहर चिर-तरुणियो
जियो, जी भर जियो

डरो मत सुख-दुख-भंवर से, लगाओ चुम्बक अतल में
डूब कर उबरो, उबर कर डूब जाओ पुनः जल में
सप्त सप्तक धर, मुहमुहु सांस लो मुरलियो
जियो, जी भर जियो

अतल हो या सुतल, सुन्दर सकल संकेतस्थली है
देह धर आत्मा किसी अभिसार के पथ पर चली है
ठठक कर मत अटक जाओ वेण सुन, हिरनियो
जियो, जी भर जियो

साध्य एक ही

⊕ मा० सु० रा गणात्ते

साधक है अगणित,
पर साध्य एक ही।
पर है सत्य एकही।।

कहो सगुण या निर्गुण,
जिस को कृपा की वर वृष्टि की
अनन्त पीयूष धार बहाती—
सामरस की ही सरस नीति पर;
पर, पाते साधन के ब्याज पर।

धर्म मार्ग अनेक,
पर लक्ष्य एक ही;

⊕

सांझ का गीत

⊕ नित्यानन्द तिवारी

एक
जैसे कण्व के तपोवन से धुआं उठता है
सांझ के जल से भीगा
मालिनी का तट
नमित है
कण्टकित कोई हिरन.......
तट सिहरता है !
मत छुओ वह क्षण
बहुत दुखता है।

प्रगति-प्रगती

निर्मल 'मिलिन्द'

पास ही है मंजिल, हम बढ़ते चले जायें,
खेतों में चलकर हम फावड़ा उठायें,

मस्ती के गीत गायें रे,
मस्ती के गीत गायें रे।

बढ़ते चलेंगे हम तो क्या है तूफान ?
हिलने न दें डिगने न दें अपना ईमान,
हँसकर खेलें हम बाधाओं के बाण—

मगर मुस्करायें रे,
मस्ती के गीत गायें रे।

खुशियों से भरदें हम धरती का कोना,
लेकिन पड़ता है पसीने को बोना,

कदम बढ़ायें रे,
मस्ती के गीत गायें रे,

किस्मत के दिन गये अब मिहनत का राज,
ईश्वर को क्या हक जो होवे नाराज ?
काटना है कल्ह चलो बोयें हम आज—

कि कजरी उठायें रे,
मस्ती के गीत गायें रे।

—

तेरी पलकों पर

⊕ निरंजन

तेरी पलकों स्वप्न खेलता, मेरे नयनों में रात जागती ।
गुन गुन करते मधु जीवन बीता,
मिट रही हृदय की स्मृतियाँ कितनीं ।
ये विकल सिंधु की चंचल लहरें,
दे जातीं सुधि की निधियाँ अपनी ।

तुम तो खो जातीं अपनेपन में, मेरी पीड़ा मुस्कान बाँटती ।
तेरी पलकों पर स्वप्न खेलता, मेरे नयनों में रात जागती ।

युग के बन्धन को तोड़-तोड कर,
अपने को बांध रहा बन्धन मे ।
रेखा प्रकाश की नित्य खींचता,
पर ज्योति नही आई जीवन मे ।

तेरे अधरों पर सुधा बरसती, मेरी अभिलाषा प्यास माँगती ।
तेरी पलकों पर स्वप्न खेलता, मेरे नयनों में रात जागती ।

दीपक से लघु है लौ की लघुता,
सीमा प्रकाश की जला न सकती ।
हैं आज आकुल क्यों प्राण मेरे,
क्यों मन की व्यथा न कविता बनती ?

तुम छोड़ चली हो सूनेपन में, मेरी राह अंधकार पालती ।
तेरी पलकों पर स्वप्न खेलता, मेरे नयनों में रात जागती ।

—

बन्दी का गीत

● निरंकार देव सेवक

मैं बन्दी समय का किन्तु मेरी कल्पना स्वाधीन
मेरी देह अपने जन्म
के विश्वास से आबद्ध
मेरा मन अनिश्चित मृत्यु
के आभास से आबद्ध

फिर भी मुक्त मेरे प्राण अविरत साधना में लीन
मैं बन्दी समय का किन्तु मेरी कल्पना स्वाधीन।

मेरे गीत की झंकार
कब पहुँची क्षितिज के पार
कब सीमा समय की लाँघ
पाये नवस्वरे उद्गार।

पर मेरे हृदय के मौन स्वर को साध सीमा हीन
मैं बन्दी समय का किन्तु मेरी कल्पना स्वाधीन।

चारों ओर मेरे सत्य
के संसार की दीवार
मैं हूँ तीलियों के द्वार
पर बैठा बंधा लाचार

पर मेरे नयन की पुतलियों के स्वप्न हैं रंगीन
मैं बन्दी समय का किन्तु मेरी कल्पना स्वाधीन

—

सुनो

निशाकर त्रिपाठी

सुना है—?
अजगर की खाल के कपड़े
एक फैशन हैं, ओ सपेरे
उत्तर में बहुत से अजगर हैं,
उन्हें पकड़ लो, वध दो।
उठो, जागते रहो—
शंख ध्वनि गूंजती है,
रव घोर, चारों ओर—
पश्चिम से सिल्यूकस आया है,
ओ मेरे चन्द्रगुप्त,
विजय वरण करलो,
वर्तमान के पृष्ठ पर—
व्यतीत की कथा लिख दो।
बढ़ो—
कि गोरा धमाकों में,
शस्त्रों के गर्जन में, झंकरण में,
नई कविता, नई कहानी,
नयापन लेखनी के बिन्दु में,
मार्ग छिड़क कर,
टेढ़ी मेढ़ी रेखाएँ,
छोड़ो—
मेरे कवि,
कलम रख दो, बन्दूक उठा लो।

फूल रोएंगे भरी बहार में

@ नीरज

मेरा श्याम सकारे मेरी हुन्डी आधी रात को,
मुझे जरूरत क्या जो जाऊं किसी राज दरबार में ।
भोर जगाए आ कर मुझ को चिड़िया सोनपंख वाली,
रात सुलाए चांद, शीश पर तान सितारों की जाली,
जाग-जाग पहरा दे जुगनू, बने डाकिया खुद कागा,
बिना बुलाए श्याम बदरिया भर जाए गागर खाली,
एक नहीं, दो नहीं, सृष्टि की सृष्टि सहेली है मेरी,
किसी महल के हाथ बिकूं क्यों फिर दो-चार हजार में !
प्रेम-रतन झोली में मेरी दुख जग भर के हमराही,
हाथों में वह कलम कि जिस ने आंसू कर डाले स्याही,
मैं इतना धनवान कि मुझ से लेतीं कर्ज सभ्यताएं,
दुनिया हुई गरीब, कभी जब की मैं ने लापरवाही,
यह मेरा अहसान मंच पर जो मैं हूं मौजूद यहां
वरना मेरा पता न पाता सूरज तक संसार में !
दरद दे गई मीरा मुझ को, सूर दे गया मन प्यासा,
सिखला गया जुलाहा फक्कड़ सब भाषाओं की भाषा,
मैं किस से क्या मांगूं, मेरी दासी तक रितुएं सारी,
होठों चले बयार बसन्ती, आंखों रिमझिम चौमासा,
वे मल्लाहों का मुंह ताकें जिन को पार उतरना हो,
हम उन में हैं जो खुद किश्ती डुबो गए मंझधार में !
मैं कैसे सिंहासन पूजूं बंशी मेरे हाथों में,
क्यों कर कंचन गहूं, स्वर्ग जब त्यागे बातों-बातों में,
यह तो अपनी-अपनी किस्मत अपनी-अपनी रुचि, भाई !
तुम्हें मिला सुख राजमहल में मुझे मिला बरसातों में,
फेंक रहा है बाग आज तो मिट्टी मुझ पर मनमानी,
कल जब हूंगा नहीं फूल रोएंगे भरी बहार में !

मंजिल

● नीलिमा कृष्ण

रात खड़ी हँसती जब तुमको मंजिल रही पुकार;
लाख आँधियां चलें घिरें पर जाना है उस पार;
घोर अमा की निशा भयानक पथ सूना अनजान,
चलें चरण तेरे द्रुत गति से गाते पौरुष-गान;
दूर क्षितिज के पास दीखता तेरा मंगल दीप—
कंटक-पथ तेरे पग-रज से कुसुमित हों सुकुमार !
जीवन में विपदाओं के घट कभी न होते रीते,
परिभाषा यह सदा जानती युग आये औ बीते;
माल लगन कंचन बन जाती समय-शिला पर आकर—
करो ज्वलित अपने उर-अन्तर लक्ष्य-स्नेह को ढार !

कुहरे की एक प्रात

● प्रभात जैन

कुहरे की चादर में लिपटा आकाश
पीर भरी यादों का जैसे आभास
छितरे धुँधलके में हिलते से रूख
शरमा कर डाले ज्यों घूँघटवा धूप
जैसे कि मौसम के बिखरें हों केश
छुप कर ज्यो सोये हों छितजी अवशेष
मन की विवरीता को ढाके ज्यों आंचल
विधवा की आँखों का बहता काजल
बूँद-बूँद रिसता है शीत का खुमार
ढांक लिया कुहरे ने दिन का उभार
सिसक रही भानु किरण कुहरे की ओट
तम ने उजियारे का गला दिया घोंट

—

हे राम

⊕ प्रह्लाद राजवेदी 'राकेश'

काम पर काम
पर काम पर काम;
जाने कब फुर्सत मिलेगी
हे राम !
काम सुबह
शाम, अविराम।

—

पीते-पीते

⊕ प्रभुनारायण श्रीवास्तव

नीलम पट पर निज अंसुअन से
तारों की लिखी तुम्हें पाती,
लेकर कर में, मैं ज्तोति कलश
विरहिन ऊषा बन नित आती
लिपटी मेघ—कफन में है
आशा की मेरे चन्द्र किरन
सांसों के मातम से थक कर
अब सोना चाहे यह जीवन
सुन करके लहरों का तड़पन
मेरी चपला क्यों तड़प उठी ?
मेरे मनकी वो छिपी टीस
पीड़ा घन बन कर बरस उठी ?
मैं तो तेरी वो प्याली हूँ
जिससे पीते तुम वे हाला
लुढ़का क्यों दी तुमने प्रियतम
पीते-पीते यह मधुशाला।

—

डरता हूँ

⊕ प्रवीण नायक

डरता हूँ तुम्हारे अभाव में,
तुम्हीं कोई, मुझे अपना न बना लें
जैसा, मैं तुम्हें बनाना चाहता था,
पर आह, न जाने कहाँ से.

तुम्हारे नारीत्व का अह्म
दीवार बनकर, आ गया जिस पर,
मेरा पुरुषत्व, कोहरा बन छा गया तभी

तृप्ति का लालच देकर,
छीन लिए तुमने, अनायास ही—
सुख के वे स्वर्णिम क्षण, मैं अतृप्त था
अतृप्त ही रहा।

न तुम मिली, सुख मिला पर
कुछ क्षणों के लिए, आवेग से अवेश हो,
भावनाएँ मेरी सिमट गईं तृप्ति की गहन भंवर में,
चेतना मेरी बिखर गई।

तुम्हारा रूठ कर जाना
मेरा एकाकी रह जाना

सभी कुछ याद है मुझको फिर भी
मेरी हर स्वांस ने तुम्हें चाहा है
मेरे हर गीत ने तुम्हें बुलाया है।

गीत

परमानन्द श्रीवास्तव

हलती कहीं
नीम की टहनी।
भूल गयीं वे बातें सब की सब जो तुम को कहनी।
गन्ध-वृक्ष से छूटी-छूटी
चली हवाएँ कितनी तीखी
मार रही हैं कैसे ताने
कहती हैं कैसी
अनकहनी

'यदि' का सुख

प्राण खुल्लर

यदि तुमने
मुझे नकार दिया होता,
शायद अपने को अधिक सुखी कहता मैं।
यदि परिचय सहज स्वाभाविक ही रहता
यदि गलत फहमियों को शह न मिलती
यदि बचकाने वादे न हम तुम करते
यदि कागज की झूठी कलियाँ न खिलतीं
यदि प्रेम प्रेत का नाम भी न हम लेते
शायद अपने को अधिक सुखी कहता मैं।
कम से कम यह अनहोनी तो न होती
किस्मत के माथे यों खरोंच न आती
तुम मेरे दुख में चाहे न रो पातीं
अपने सुख में हंसती और मुस्कातीं
यदि सहज-मना अपने सुख दुख जीतीं तुम
शायद अपने को अधिक सुखी कहता मैं।

—

गीत सुहाने

पी. आर. रुक्माजीराव 'अमर'

मैं क्यों अपने गीत सुनाऊँ ?
जगती के गाने से पहले,
मेरे थे वे गीत सुहाने;
जाना मैंने गीत गवाकर, मन में उनके क्यो मैं भाऊँ ?
मैं क्यो अपने गीत सुनाऊँ ?
मेरे मन को आज वहाने,
जीवन नैया मे ले जाने;
किससे अपने गीत गवाकर, जी भर कर उनको बहलाऊँ।
मैं क्यों अपने गीत सुनाऊँ ?
चन्दा की प्यारी उजियाली,
हाथों में ले मद की प्याली;
पीकर कैसे उनको ऐसे, प्यारे मेरे गीत सुनाऊँ ?
मैं क्यों अपने गीत सुनाऊँ ?

—

काल बेलिया

परशुराम 'विरही'

आओ, हम कालबेलिया बनें।
गैरिक पहनें, बीन बजायें,
काल पकड़—
विप दन्त उखाड़ें, गाँव गांव जाकर दिखलायें
काल हमारे वश में—युग-सर्प हमारे वश में।
आओ हम कालबेलिया बनें।

—

सुन, रे जलध कुमार !

प्रेमबहादुर 'प्रेमी'

इतना मान न कर जिज मन में,
क्या कुछ कम है इस जीवन में;
निशि-दिन बरसें दृग बेचारे—
झर-झर झरत फुवार ।
सुन, रे जलध-कुमार !
जा, उस देश जहाँ जीवन-धन,
लेता जा मेरे आंसू-कण ;
इतना और उन्हें कह देना—
"तुम को सुमधुर प्यार"।
सुन, रे जलध कुमार !

—

भटकी आस्था

प्रेमशंकर 'आलोक'

आस्था,
सोते से जाग ।
बड़ी अभागी ।
स्वप्न की रेशमी डोर से—
खुल कर भी;
अटक गयी—
और;
रात के अँधेरे में,
अबोली छाया सी;
भटक गयी !

—

कौन जाने

पंकज

मैं अधूरे जागरन का सुप्त यौवन,
एक अंगड़ाई उमड़कर थम गई है।
चेतना अनघुल रगों में लिप्त होकर,
अधवनी सी हो, ठिठुर कर जम गई है।
एक अनबूझी पहेली घेरती है,
और मैं सहमा, समाता जा रहा हूँ।
जूझता है मौन अपनी वेदना से,
मैं विवश सा आज गाता जा रहा हूँ।
कुछ अधूरे स्वर लिए विप्लव खड़े हैं,
मुझे मेरी व्यग्रता झकझोरती है।
अनवरत तनता गया जब मैं स्वयं में
कौन सहसा आज मुझको तोड़ती है।
गीत सांसों में समाए प्रखर तृष्णा,
आज अनउलझी जवानी मांगते हैं।
कुछ नई पुरवाइयों के मन्द झोंके,
एक कौतूहल समेटे झाँकते हैं।
आज, सारी रात मैं जीता रहूँगा,
इन अधूरी कथा के पन्ने छिपाए।
एक आशा कांपती सी कह रही,
कौन जाने, कब नया अध्याय आए।

—

रजनी-गंधा

⊕ 'प्रेमी', अनूप

रजनी गंधा... ...
पल भर न सोई है
रात भर रोई है
किसी अवसाद में ?
प्रियतम की याद मे ?

सुधियों के नन्दन में
नींद कैसे आये
सपनों के कुंज जब
चाँद छुप जाये।

किरणों के बन्धन में
सोने की साध थी
उर के स्पन्दन में
जीवन-सौगात थी।

लेकिन सुहाग की
रात अमा छा गई
नभ में बदली घिरी
रिमझिम बरसा गई।

रात भर जगना है
रात भर सिहरना है
विषधर की बाँहों में
रात भर महकना है।

—

⊕ पाण्डेय 'आशुतोष'

बहुत थका मन सुनते-सुनते दुनिया भर के गीत सुहाने,
एक कड़ी तुमसे सुनने को मेरे प्राण बहुत व्याकुल हैं !

वैसे तो हर किरन सुबह की मुझको कंठ लगा जाती
वैसे तो पूनम की पायल मुझको बहुत रिझा जाती
लेकिन जब उनके होठों से अपना गीत सुनाई
तो सच मानो मेरे मन की पीड़ा बहुत भुला जाती

लावारिस थे गीत इसलिए मंडप से उठ गयी रागिनी
तबसे हँसी उड़ाती कोयल और व्यंग्य करती बुलबुल है !

टेर थकी, साँसों की वंशी लेकिन तुमने सुधि विसरा
मेरा हृदय बहुत भावुक है अत: न हो सकती निठुर
जनम-जनम के स्वप्न नशीले मेरी नींद हराम कर
और इधर तैयार नहीं है प्यास दिखाने को तरुए

मेरी वर्ष गाँठ मरुथल ने मनवायी थी सबसे पहले
यही एक कारण है-मेरे पद चिह्नों पर खिले मुकुल हैं !

पथ से धूलि उड़ा अंबर में मैंने था सौवार पुक
कहने वाले कहें-बहुत ही दूर यहाँ से गाँव तुम्ह
अगर न आया होता सीधी राहों से तो भेंट न हे
किस-किस को मैं कहूँ ? चाँद तक ने था मति पर टोना म

रखकर कितनी कसम लौटने की, तब यहाँ पहुँच पाया हूँ
मुझे न रोको, मेरी राह देखते कहीं नयन मंजुल हैं !

—

मन भावना मधुमास—

⊕ पुष्पलता 'नीलिमा'

खिल उठी सरसों हृदय में भर मधुर उल्लास
जान पड़ता आ गया मन भावना मधुमास।

झाँकती घूँघट उठा कलि
खिलखिलाते फूल,
झूमती है डालियाँ बेसुध
दुखों को भूल,

लड़खड़ाता चल पड़ा यह बावला वातास,
जान पड़ता आ गया मनभावना मधुमास।

मुस्कराते शस्य खेतों में
लिये उपहार,
मटर-फलियाँ कर हिलाती
मुग्ध उर सम्भार,

कृषक-जोड़ी उमगकर है छोड़ती निश्वास
जान पड़ता आ गया मनभावना मधुमास।

उड़ चले अलि गुनगुनाते
पा सुरभि सन्देश,
नाचती तितली फुदकती
ले मनोहर वेश,

कूकती कोकिल विहँसता स्वच्छ मन आकाश,
जान पड़ता आ गया मन भावना मधुमास।

—

मेरे प्राण बहुत व्याकुल हैं

@ पाण्डेय 'आशुतोष'

बहुत थका मन सुनते-सुनते दुनिया भर के गीत सुहाने,
एक कड़ी तुमसे सुनने को मेरे प्राण बहुत व्याकुल हैं !

वैसे तो हर किरन सुबह की मुझको कंठ लगा जाती है
वैसे तो पूनम की पायल मुझको बहुत रिझा जाती है
लेकिन जब उनके होठों से अपना गीत सुनाई देता
तो सच मानो मेरे मन की पीड़ा बहुत भुला जाती है

लावारिस थे गीत इसलिए मंडप से उठ गयी रागिनी
तबसे हँसी उड़ाती कोयल और व्यंग्य करती बुलबुल है !

टेर थकी, साँसों की वंशी लेकिन तुमने सुधि बिसरायी,
मेरा हृदय बहुत भावुक है अतः न हो सकती निठुराई,
जनम-जनम के स्वप्न नशीले मेरी नींद हराम कर गये,
और इधर तैयार नहीं है प्यास दिखाने को तरुणाई,

वर्ष गाँठ मरुथल ने मनवायी थी सबसे पहले
एक कारण है-मेरे पद चिह्नों पर खिले मुकुल हैं !

पथ से धूलि उड़ा अंबर में मैंने था सौ बार पुकारा,
कहने वाले कहें-बहुत ही दूर यहाँ से गाँव तुम्हारा,
अगर न आया होता सीधी राहों से तो भेंट न होती,
किस-किस का मैं कहूँ ? चाँद तक ने था मति पर टोना मारा,

रखकर कितनी कसम लौटने की, तब यहाँ पहुँच पाया हूँ
मुझे न रोको, मेरी राह देखते कहीं नयन मंजुल हैं !

—

मन भावना मधुमास—

☺ पुष्पलता 'नीलिमा'

खिल उठी सरसों हृदय में भर मधुर उल्लास
जान पड़ता आ गया मन भावना मधुमास।

झाँकती घूँघट उठा कलि
खिलखिलाते फूल,
झूमती है डालियाँ बेसुध
दुखों को भूल,

लड़खड़ाता चल पड़ा यह बावला वातास,
जान पड़ता आ गया मनभावना मधुमास।

मुस्कराते शस्य खेतों में
लिये उपहार,
मटर-फलियाँ कर हिलातीं
मुग्ध उर सम्भार,

कृषक-जोड़ी उमगकर है छोड़ती निश्वास
जान पड़ता आ गया मनभावना मधुमास।

उड़ चले अलि गुनगुनाते
पा सुरभि सन्देश,
नाचती तितली फुदकती
ले मनोहर वेश,

कूकती कोकिल विहँसता स्वच्छ मन आह्लाद,
जान पड़ता आ गया मन भावना मधुमास।

—

पावस : एक चित्र

@ पौद्दार रामावतार 'अरुण'

झननन झंकार उठी पावस की तूमरिया !
नैन नचा ताली दे, मक्के के खेत उठे,
गदराए आम किसी राही को पेख उठे;
मटकी ले सीस खिली दूध-हँसी गूजरिया !
अँबुआ के डाले पे
रसभीगी पैंग लसी,
मत माती जौवनियां
तुनक तुनक झूम हँसी;
फर फर फर फहर उड़ी कंधे से चूनरिया !

प्यार नहीं विकता है

@ ब्रह्मानन्द भारद्वाज 'राज'

वेचना है प्यार तन का,
पर मन का प्यार नहीं विकता है।
इकरार भरे अनगाये गीतों में,
मन की थिरकन अनचाही रीतों में,
मिला न कोई मीत मतवारा मीतों में,
वेचना है प्यार तन का,
पर मन का उपहार नहीं विकता है।
चौराहे पर मिलने पर भी,
खो दिया जो मीत मिला था,
प्रतिघातों की आघातों पर भी,
समझ गया जो समीप मिला था,
वेचना है प्यार तन का,
पर मन का सम्भार नहीं विकता है।

चल दिया कारवाँ

⊕ ब्रजराज दीक्षित 'मधु'

मिट गई जिन्दगी मृत्यु हँसती रही,
चल दिया कारवाँ धूल उड़ती रही।
चिन्ह बनते रहे। और मिटते रहे,
रह गई स्मृति-गीत बनते रहे।
घाव छिलते रहे, पीर-पलती रही,
चल दिया कारवाँ धूल उड़ती रही।
जल रही हर कली। जल रही हर गली,
ठोकरें दे रही हैं-डगर की डली।
होठ रोते रहे, आँख हँसती रही,
चल दिया कारवाँ धूल उड़ती रही।
स्वप्न भी तो नयन को, डराने लगा,
दिन उगा भी नहीं-चाँद जाने लगा।
दर्द बढ़ता रहा, रात ढलती रही,
चल दिया कारवाँ, धूल उड़ती रही।
स्वर्ण के मोह में, जानकी हर गई,
खेल ही खेल में-द्रौपदी छल गई।
हार होती रही ? गोट चलती रही,
चल दिया कारवाँ, धूल उड़ती रही।
पाँव मिलते रहे। कन्टको के गले,
छोर छुटता रहा, राह कैसे चले।
तिमिर बढता रहा, ज्योति जलती रही,
चल दिया कारवाँ, धूल उड़ती रही।
लड़खड़ाता कदम, लोचनों ने ठगा,
फूल का भी हृदय, शूल ही से लगा।
राह सूनी रही, आस गलती रही,
चल दिया कारवाँ, धूल उड़ती रही

—

मैं न रुकूँगा

ब्रह्मसिंह भदौरिया 'दीपक'

मैं परदेसी,
मैं न रुकूँगा,
तेरे इंगित भरे नयन में।

तान, छन्द लय आराधन स्वर
मुखरित हुये विषम राहों पर
किन्तु कुन्तलों की छाया में
रूठ गये मेरी आहों पर

मैं परदेसी,
गा न सकूँगा,
काली रेशम के बन्धन में
तेरे इंगित भरे नयन में।

जब अपनी चाही नीलामी
हर बाजार मुझे ठुकराये
और आज मेरी सांसों के
हर बोली पर मूल्य बढ़ाये

मैं परदेसी,
मैं न बिकूँगा
चादर ताने अवगुंठन में
तेरे इंगित भरे नयन में।

—

तीर मारा मत करो

● बेचन शर्मा 'उग्र'

भोर ही—
इस जोर से, इस तौर से,
(हाथ जोड़ूं देवता !)
मुझको पुकारा मत करो !
नींद मेरी तोड़ कर
सारे सपन,
—अरे, सोने के हिरन के !—
(हाथ जोड़ूं देवता !)
तुम यों किरन के
तीर मारा मत करो !
भोर ही !

—

स्वप्नगंधी उम्र

● बलराज जोशी

उजली धूप की गोद में, लेटी है सद्यः स्नाता तपन
कुंवारे पंखों की रजनीगंध में, खिला है यह सुकुमार क्षण
पलकों पर छाप लो तस्वीर, स्पर्श से रंग बिखर जाते हैं
वर ले जायेगा स्वप्नगंधी उम्र को, आगत का वह कौन सपन ।

—

जागता रहेगा : भारत का हर किसान

⊕ बलराम दत्त शर्मा

उठ ! ऐ ! मेरे किसान !!!
तुझे पुकारे सीमा का जवान !
उसके हाथों में हाथ मिलाकर चल,
कि कंधे से कंधे भिड़ा कर चल ?
बन्दूक उसके हाथ तो हल तेरे हाथ है,
कि शान देश की तुम दोनों के साथ है ।
आज दुनिया को नया नारा सुनाना है,
कि खेत और मोर्चे का इक बनाना है ।
हम रणबांकुरे हैं तो खेत के बादशाह भी हैं,
हम देश के रक्षक भी हैं,
और शहंशाह भी हैं ।
उठो ! कि अब नहीं मोहताज होंगे हम,
कि सुनो दुनियवालो ! इक आवाज होंगे हम ।
चलेंगी गोलियाँ सीमाओं पर,
लड़ेंगे हमारे जवान,
कि खेतों में फसलें लहराती रहेंगी,
जागता रहेगा भारत का हर किसान ।।

—

चांद ढलने ना दूं

⊕ बलवीर सिंह 'करुण'

जब तारों के दीप हंसे प्रिय अम्बर में,
कोई मीठी याद उभर आये मन में,
शीतल मन्द पवन परसे जब तन मन को;
मन चाहेगा आज चांद ढलने ना दूं।

मधुर मिलन की चाह कभी क्या बीतेगी,
अपनी मधुमय बात कभी क्या बीतेगी।
रीत जायेगी चन्दा की अमृत गगरी;
पर वह मादक रात कभी ना बीतेगी॥
कोई मदिर हिलोर उठे जब अन्तर में,
तारों की बारात उतर आये घर में,
कोई मीठा राग लुभा जाये हमको,
मन चाहेगा आज रात ढलने ना दूं।
और चांद चलने ना दूं॥

—

पायल की छम छम

⊕ बन्सीलाल "पारस"

सागर के उर में देखतीं, बड़वानल की आग है,
पायल की छम छम, मैं सुनलों कोई क्रन्दन राग है।
आदर्शों के पहरेदारों, बात छिपाओ मत मन की तुम,
मत चन्दाको बदनाम करो, सच बोलो कौन यहां बेदाग है॥

उस अभागे प्राण को

⊕ बलवीर सिंह 'रंग'

जो अयाचित हो उसी को दान कहते हैं।
क्या हुआ नभ पर न यदि
खग का बसेरा हो सका
क्या हुआ अरमान यदि
पूरा न मेरा हो सका
जो अधूरा हो उसे अरमान कहते हैं।
चीर कर गिरि के हृदय को
वह रही सरिता अबाधित
उर्मियों में हो रहा कलकल
सजल क्रन्दन निनादित
कवि उसे गिरि के हृदय का गान कहते हैं।
जो पराई पीर पर यदि
आह भर सकता नहीं,
जो किसी के प्यार पर
विश्वास कर सकता नहीं
उस अभागे प्राण को पाषाण कहते हैं।

ओ अनागत तुम

⊕ बशीर अहमद मयूख

कौन दस्तक दे रहा है द्वार पर
दे उनींदे स्वप्न की सौगन्ध जैसे
गंध-भीनी फागुनी सी भोर में
चाँद की ढलती हुई परछाइयों को चीर
बोले एक पंछी टीं-टवीं-टीं-टुट
ओ अनागत तुम !

—

घन-बालाएँ

⊖ बालकवि 'बरागी'

त्नाकर की राजसुताएं करती हैं उत्पात घनेरे
घन-बालाएं केश बिखेरे

जब पातीं ऊषा की आहट
इधर-उधर से आ कर नटखट
उलट लाज के सारे घूंघट
लिपट-लिपट जाती सूरज से
निर्वसना ही रोज सवेरे
घन-बालाएं केश बिखेरे

भरी दुपहरिया लरज-लरज कर
झूम-झूम कर गरज-गरज कर
लोक-लाज को बरज-बरज कर
मनु श्रद्धा के कर्मांचल में
कर जाती है सौ-सौ फेरे
घन-बालाएं केश बिखेरे

मत पूछो सध्या की बतियां
पुरवा को दे-दे कर पतियां
निठुर, ठगारो, ये सूरतियां
किस अनजाने प्रियतम के हित
चुनती हैं नित लाल कनेरे
घन-बालाएं केश बिखेरे

और रात में दे कर तालें
बजा-बजा नूपुर मतवाले
छलका-छलका रस के प्याले
बेसुध रखती है चन्दा को
कस-कस कर बांहों के घेरे
घन-बालाएं केश बिखेरे

—

दर्द

⊕ बाबूलाल 'मधुकर'

वर्षों बाद विश्वास का पथ
चौराहा बन गया संगमरमर में
काई जम गयी और लगता है जैसे
मैं फिसल रहा हूँ, आज दर्द फिर जागा है।

जिन्दगी

⊕ बुधमल शामसुखा

अरे ! ओ ! प्लेटफार्म
आंख खोल देखले
गाड़ियाँ..........सरकती हैं
ज़िन्दगी 'विस्ल' है
सावधान करती है—
गाड़ियां चलती हैं।

विराम चिन्ह

⊕ डा० बेचन

विराम चिन्ह खोजता हूँ,
अंधकार औ बुझती हुई स्ट्रीट की लाइटें,
गेट पास मेरे पास है
कौन रोकता है-?
सचमुच तुम्हें मैंने ही छोड़ा है
अंधेरा घुप है, चलना अनिवार्य है
चलता जा रहा हूँ
विराम चिन्ह खोजता हूँ।

छला करता हूँ

⊕ बाबूलाल दुबे 'निपङ्ग'

जब से सुर छेड़ गई प्रेम भरी बाँसुरी,
तब से कुछ भाव नये गीत बन मचल उठे।
कुन्तल के छांव बिना यौवन दोपहरी में,
प्यासा सा आश लिए नित्य जला करता हूँ।
बीते की बातों की शैतानी घातों से,
आये दिन-रात सुबह-शाम छला करता हूँ।
जब से मन वेध गई कजरारी कोरों से,
घायल के घावो संग भाव भी पिघल उठे।
चन्दा सङ्ग रजनी की प्रीति भरी बतियों को,
धीरे से सुधियों की सखियाँ कह जाती हैं।
अनजाने मानस की सुकुमारी स्मृति तब,
बिन ब्याहे सपनों की गलियों में आती हैं।
वीणा सी सरगम जब साँसो से खेल गई,
संध्या के दीपक से अंग-अंग खिल उठे।
बासती यादों की महक भरे मधुवन में,
राधा के नूपुर मय चरणो की थिरकन है।
चाहा तो बहुत आज सपनो से दूर रहूँ,
लेकिन अनजाने ही मिलने की बिहरन है।
जब से मधु छोड़ गई रंग भरी गागरी,
पतझर के आँगन को सावन घन छल उठे।

—

दर्द

⊕ बाबूलाल 'मधुकर'

वर्षों बाद विश्वास का पथ
चौराहा बन गया संगमरमर में
काई जम गयी और लगता है जैसे
मैं फिसल रहा हूँ, आज दर्द फिर जागा है।

—

जिन्दगी

⊕ बुधमल शामसुखा

अरे ! ओ ! प्लेटफार्म
आँख खोल देखले
गाड़ियाँ..........सरकती हैं
ज़िन्दगी 'विस्ल' है
सावधान करती है—
गाड़ियाँ चलती हैं।

विराम चिन्ह

⊕ डा० बेचन

विराम चिन्ह खोजता हूँ,
अंधकार औ बुझती हुई स्ट्रीट की लाइटें,
गेट पास मेरे पास है
कौन रोकता है-?
सचमुच तुम्हें मैंने ही छोड़ा है
अंधेरा घुप है, चलना अनिवार्य है
चलता जा रहा हूँ
विराम चिन्ह खोजता हूँ।

छला करता हूँ

⊕ बाबूलाल दुबे 'निपङ्क'

जब से सुर छेड़ गई प्रेम भरी बांसुरी,
तब से कुछ भाव नये गीत बन मचल उठे।
कुन्तल के छांव बिना यौवन दोपहरी में,
प्यासा सा आश लिए नित्य जला करता हूँ।
बीते की बातों की शैतानी घातों से,
आये दिन-रात सुबह-शाम छला करता हूँ।
जब से मन वेध गई कजरारी कोरों से,
घायल के घावों संग भाव भी पिघल उठे।
चन्दा सङ्ग रजनी की प्रीति भरी बतियों को,
धीरे से सुधियों की सखियाँ कह जाती हैं।
अनजाने मानस की सुकुमारी स्मृति तब,
बिन ब्याहे सपनों की गलियों में आती हैं।
वीणा सी सरगम जब सांसों से खेल गई,
संध्या के दीपक से अंग-अंग खिल उठे।
बासती यादों की महक भरे मधुवन में,
राधा के नूपुर मय चरणों की थिरकन है।
चाहा तो बहुत आज सपनों से दूर रहूँ,
लेकिन अनजाने ही मिलने की बिहरन है।
जब से मधु छोड़ गई रग भरी गागरी,
पतझर के आंगन को सावन घन छल उठे।

—

विनोवा भावे

◉ मगन अवस्थी

वापू का ही रूप दूसरा इनको जगती जाने
परम तपस्वी कहती दुनिया देव तुल्य श्रामाने।
छोटी सी दाढ़ी है इनकी चश्मा सदा लगाते।
गांव-गांव में भूमिदान की जाकर अलख जगाते।
जन जीवन का हृदय जीत कर लिया भूमि का दान
मालुम पड़ता इस युग के हैं वे वावन भगवान।
इनकी त्याग तपस्या गुण को कौन कहां तक गावे
जन-जन की वाणी कहती जय संत विनोवा भावे।

कर्म का साक्षी

◉ मूलचन्द राठौर

आज धीवर ने अपन पतवार
मुझे थका दी है।
अव मैं क्रियाशील लहरों का साथी हूं—
सागर की वागडोर-मेरे हाथ में है
गोताखोर वन,
कर्क से क्षितिज रेखा तक
भू-गर्भ टुकड़े विछा दूंगा, और सीपियों से प्रकाश का घर व
दूंगा ताकि
आने वाली अनेक किश्तियां
पथ में पथरावे नहीं
भावी युग—
भावना का भूखा नहीं
कर्म का साक्षी होता है।

जरा आज घूँघट उठाओ

⊕ मदन मोहन 'उपद्र'

द से रूप पर मन मचल सा रहा है,
सुनो तो जरा आज घूंघट उठाओ।

कमल पांखुरी रूप पर हंस रही है,
किरन के अधर चूमने बढ रही है;
भ्रमर के नयन पुष्प की रक्तिमा से,
अरुण हो रहे हैं मचल से रहे हैं।

मचलते नयन को अरे तृप्त कर दो,
अरुण ओठ की मुस्कराहट दिखाओ।

हृदय में नई पीर सी जग रही है,
किसी की कही कचुकी खुल रही है,
कही पर प्रणय की प्रभा सी बिखरती,
कही प्रीति की रागिनी बज रही है।

सुनो रूप की माधुरी बांट दो,
छिपो मत अधिक आज चिलमन हटाओ

अरे रूप कलिया न फिर से खिलेगीं,
ये मधुमय फुहारें न हरदम मिलेगी।
ढलेगी कभी रूप की चांदनी भी,
ये मन भायी बतिया न फिर से चलेगीं।

सुनो भूल कर भी न डूबो लहर में,
नयन-झील में स्वप्न-मोती तिराओ
सुनो तो जरा आज घूंघट उठाओ

—

कौन जाने

वैद्य मदनगोपाल चांडक

पहुँचे तेरे तक मेरे ये मन के गीत सजाए।
तो पग-पग पर फूल बिखेरूं मेरे प्रिय मन भाए ॥

श्याम घटाएं अठखेली कर घहर घहर कर बरसें।
चातक की पी-पी सुनने को नभ शशि सूरज तरसें ॥

विरहिन की व्याकुल पुकार से कहीं कन्त आ जाए।
तो पग-पग पर फूल बिखेरूं मेरे प्रिय मन भाए ॥

वृक्षों की हरियाली चूमें अवनी की नीरसता
गंध समीर बांट कर सोए अंबर में जब हँसता ॥

कोयल की मृदु कुहू-कुहू से जो वसन्त आ जाए।
तो पग-पग पर फूल बिखेरूं मेरे प्रिय मन भाए ॥

पथ बीहड़ एकाकी राही आशा दीप संभाले।
आंखे सागर को मथ-मथ कर दो दो बूंद निकाले।

श्रद्धा के दो फूल भेंट से जो अनंत छाजाए।
तो पग-पग पर फूल बिखेरूं मेरे प्रिय मन भाए ॥

मन भायी रजनी तारों का जब दुकूल हँस ओढ़े।
पूनम के पलने में चन्दा मधु पीकर के पौढ़े ॥

भूल जाए अंगार चकोरी कहीं चन्द्र आ जाए।
तो पग-पग पर फूल बिखेरूं मेरे प्रिय मन भाए ॥

अभिलाषाओं के मेले में जीवन हंस-हंस डूबे।
नन्हे से दीपक की लौ से गहन अंधेरा ऊबे ॥

खेल-खेल में ही जीवन का मधुर अन्त आ जाए।
तो पग-पग पर फूल बिखेरूं मेरे प्रिय मन भाए ॥

मन

⊕ मदन मोहन 'तरुण'

आज मन परिमल के निर्झर में भीग गया,
फुरहरी गँधीली हवा साँसों की दूर से,
रोम-रोम पोर-पोर शिरा-शिरा,
फूलों की टहनी से छू गई।
खिड़की के पीछे
चाँद नीलम की घाटी में—
धीरे से उग आया……उग आया।

'अवशा'

⊕ मदन मोहन जवालिया

जाने कब नयनों से नीर निकल बह जाता।
अर्चन के शत् शत् सुमनों से मिलन सजाता।
जब-जब उभरे भाव सरोवर उन्हें दबाया।
पर गीले अन्तर के गीले प्राकारों से,
छलक चू झर-झर कौन व्यथा कथा कह जाता।
जाने कब नयनों से नीर निकल बह जाता।।
ऊषा के स्मिथ मुख पर जो सिन्दूर लगाया।
मेरे मन वृंतों पर सुमन बना लहराया।
जग ने सुन्दरता को विषधर कह दुत्कारा।
विद्रोही मन तब विष घूँट पिये रह जाता।
जाने कब नयनों से नीर निकल बह जाता।।
पवन उड़ा चन्दन सौरभ ले भीनी-भीनी।
कोलाहल से दूर विजन में मदिरा पीनी।
औचक जगते किन्तु जगत के सहस्र फनों से,
दंशित अबला के जलभर दृग सा पथराता।
जाने कब नयनों से नीर निकल बह जाता।।

—

अजय हिमालय

⊕ मदन मोहन श्रीवास्तव

पर्वत राज हिमालय !
मां का मुकुट शुभ्र उन्नत
प्राणों से प्यारा !
सन्तरी हम सब का इज्जत का गौरव का
अडिग अचल ब्रह्मचारी तपस्वी सा !
ध्यानस्थ प्रसन्न मुद्रा
कर में गान्डीव लिए
परियों की अगवानी में
खड़ा यह वीर धनुर्धर
अर्जुन महा युग-युग का !

दीप जलाता चल

⊕ मदन 'विरक्त'

ओ वनजारे द्वार हमारे दीप जलाता चल,
अन्धकार मिट जायेगा, पुण्य कमाता चल ।
घिरा निशा का घोर अन्धेरा,
अधम स्वार्थ ने सबको घेरा;
कलह, द्वेष, पाखण्ड हृदय से, दूर भगाता चल ।
मानवता से झोली भर दे,
न्याय-नीति का आदर कर दे;
सत्य-ज्ञान शुचिता का हमको, पाठ पढ़ाता चल ।
सत्य-अहिंसा को अपनाता,
विश्व प्रेम का पाठ सुनाता,
क्रांति दूत वन, विश्व शान्ति का पन्थ सुझाता चल ।
ओ वनजारे द्वार हमारे, दीप जलाता चल ॥

नयनदीप

⊕ मधुकर ग्रष्ठाना

ग्रासपास परिचित सम्बोधन का स्वर कही
इधर उधर देखा पर पाया तुमको नही
दूर-दूर दौड़गली दृष्टि थकी खिसियायी
कौन से अधेरे मे डूब गयी परछांयी
जितना ढूंढा उतना ही तुम छिपती रही
इधर उधर देखा पर पाया तुमको नही
जोभी कुछ-देखा ग्रौर सुना सभी झूठ-रहा
ग्रागत के मोह बिना पिछला सब टूट रहा
यह भी आँखों और कानो का भ्रम-सही
इधर उधर देखा पर पाया तुमको नही
जोड़ूं या तोड़ूं यह तो मेरा काम नहीं
किन्तु उलझन में भी मिलता ग्राराम नहीं
बीता जो रात सुबह सपना बनता नही
इधर उधर देखा पर पाया तुमको नही

—

अनाम सुख

⊕ ममता ग्रग्रवाल

इस सारे सुख को नाम नहीं देंगे हम,
छोर से छोर तक, नाप कर-
यह नहीं कहेंगे हम 'इतना है, हमसे!'
सिर्फ यह अहसास, हमारे ग्रकेलेपन
कच्ची दीवारो से ढहता जायेगा,
ग्रौर हम अपनी बनायी जेलों से
बाहर आ जायेंगे।

—

पल भर का मधुमास

'मधुप' पाण्डेय

जीवन भर पतझर संग निभाने के लिये
पलभर का मधुमास बहुत होता है।

मधुरिम मुस्कान उषा की पाकर अवनी-
दिनभर दिनकर के शोलों को सहती है
व्यथित नयन में गरल सवांरे मन का-
शाम विहंसकर सध्या से कहती है

जीवन भर गम को गले लगाने के लिये
पलभर का परिहास बहुत होता है

एक बूंद बरसती है गिरि की छाती पर
बन कर गंगा वह नये गीत गाती है
जो वसुधा पर सुधा बाँटती हंस कर
एक दिन सागर का खारापन पाती है

सागर तल की गहराई पाने के लिये
विष पाषाण विश्वास बहुत होता है

है नहीं किसी को मोह यहाँ जीवन से
फिर भी जीने के लिये जिया करते हैं
ये मौत आज से कल पर टलती जाये
विष जीवन का हम सभी पिया करते हैं

जीवन भर मरघट को मनाने के लिये
जीने का आभास बहुत होता है

बरसात की धूप

मधुकर सिंह

बरसात की यह धूप, आई वर्जनाओं से,
यातनाओं से : बहुत डरती सहमती हो
अभी संध्या नहीं है पास ! ऐसे सांस के तुम
मत कंपाओ तार। सूर्य इतना तप रहा मुझमें
कि ढाला जा सके फौलाद।

प्रीतम न आये

⊕ कुमारी मधुमालती चोकसी

रे प्राण ! प्रतीक्षा में कितने दिन बीत गये,
यह मधुऋतु फिर आई पर प्रीतम; ना आये।
पागल निर्झर ने सिर धुनकर पापाणों पर-
था मधुमय निज संगीत सुना सदेश दिया।
उन सरसों के पीले-पीले-से खेतो ने-
मुसकानें भर-भर आगम का संकेत किया।
जब प्राणों ने लालिमा क्षितिज की अवलोकी
द्रुत गति से उर की आशाएँ खिल, इठलाई।
अनुरागी शून्य प्रभावों से मुरझाई-सी
उस कलिका नें निज नई दशाएँ दिखलाईं।
मैं विश्वासों का हार लिये पथ हेर रही,
वे भूल गये अपने घर का पथ, ना आये।
जब मौन हुई अन्तर की उर्मिल पीड़ाएँ
सूखी-सी लतिकाओं में आये फूल नये।
कोकिल ने कूक सुनाई जब अमराई में
मनचीती अभिलाषा के स्वर अनुकूल भये।
मैं सावन तो ले आई थी पहले दिन ही
अब भादों का आना आँखों में शेप रहा ?
रे भूल सकूँगी कैसे बीती रातों को,
इन रातों से मेरे उर का विद्वेष रहा।
मैं भावों को आधार बनाकर बैठी थी
वे जले, जलन के घावों के धन, ना आऐ

—

किसने काजल आंजा रे

◎ मनोहर शर्मा 'रिपु'

आज गगन में नाच रहा है श्यामल-श्यामल बादल रे !
आज दिशाओं की पलकों में : किसने आँजा काजल रे ?
मुदित-मयूरा नाच रहा है : नीर बरसता पावन रे !
नगर-नगर में : डगर-डगर में : आया शीतल सावन रे !
तृप्त हुआ है : युग-युग से प्यासाः अतृप्त हिमांचल रे !
आज दिशाओं की पलकों में : किसने आंजा काजल रे ?

झूम रहा है पत्ता-पत्ता : कली-कली मुस्काई रे !
प्रथम-वृष्टि फूलों की अञ्जुलिया : भर-भर कर लाई रे !
ग्राम्य- वधू का भीग गया है : मेंह सेः उड़ता आँचल रे !
आज दिशाओं की पलकों में : किसने आंजा काजल रे !

किसने आज धान के खेतों में अमृत बरसाया रे ?
किसने सूखी हुई फसल को : फिर से हरा बनाया रे ?
किसके कारण वसुन्धरा फिर से कहलाई श्यामल रे ?
आज दिशाओं की पलकों में : किसने आँजा काजल रे ?

समता की वृष्ट से किसने सृष्टि को नहलाया रे ?
महल-अटारी-कुटी-झोंपड़ा : सब में मेंह बरसाया रे ?
किसने आज बराबर बांटा : बूंद-बूंद गंगा-जल रे ?
आज दिशाओं की पलकों में : किसने आँजा काजल रे ?

आज कौन अमराई में गा-गा कर पेंग चढ़ातारे ?
किसने जोड़ा आज सार-मंडल से अपना नाता रे ?
आज किसे मिलने को आकुल घूम रहा मलयाचल रे ?
आज दिशाओं की पलकों में किसने आंजा काँजल रे ?

छोड़ रहा है आज मजीरे पर किसान क्यों फाग रे ?
कौन दे रहा है कस-कसः ढोलक पर सस्वर थाप रे
आज खुशी से धरती का : चप्पा-चप्पा क्यों पागल रे ?
आज दिशाओं की पलकों में : किसने आंजा काजल रे ?

हर्ष-माती आयी होली

● मलखानसिंह सिसौदिया

हर्ष-माती आयी होली,
रंग-राती आयी होली ।

ताल पर थिरक-थिरक आयी,
चाल में मस्ती भर लायी,
डफों पर थपक-थपक थापें,
नृत्य की चपल चरण-चापें,

कँपा थर-थर नितम्ब-चोली,
रसीली गोरी-सी होली ।
जमी फगुहारों की टोली,
लगी मन की गांठें खोली ।

लगा गंधों का हिचकोला,
पिकी मधु-कोष-कंठ खोला,
उमगों की तरंग लाया,
वर्ष फागुन में बौराया,

मुखर आनन्दों की झोली,
मदिर फगनौती ने खोली ।
वगूले उठे अबीरों के,
बहे उर विधुर अधीरों के

प्यार की बेसुध हिलकोरें,
प्राण-मन-आत्मा को बोरें,
विकल मिलनातुर हर भोली,
घुलाती मद-रस हर बोली ।

—

कल्पना का तार

⊕ महेश चन्द्र 'सरल'

कल्पना के तार को झंकृत करो तुम,
मैं युगों तक गीत गाता ही रहूँगा।
गीत के स्वर से नया सरगम छिड़ेगा,
ताल में अनुराग का सागर, भरेगा।
और लय में स्नेह की चिर-तृप्ति लेकर,
मन, नये आलाप को मुखरित करेगा।
कामना-मनुहार को जागृत करो तुम,
मैं युगों तक प्रीति करता ही रहूँगा।

प्रात का गुंजन, निशा की मौन छाया,
प्राण-वंशी फूंकता रे ! कौन आया
आ गया मधुमास तो सौ बार आये,
किन्तु पतझर को नहीं उल्लास भाया।
भावना-संसार को विकसित करो तुम,
मैं युगों तक ताप हरता ही रहूँगा।
जाग कर मैंने तुम्हें सहसा पुकारा,
प्रतिध्वनित पर रहा उत्तर हमारा।

बीत जायेगी अवधि, यह जानता हूँ,
किन्तु है विश्वास का मुझको सहारा।
साधना-आधार को संचित करो तुम,
मैं युगों तक पथ सजाता ही रहूँगा।

—

सोन चंपा सी तुम्हारी याद

⊕ महेन्द्र भटनागर

सोनचंपा-सी तुम्हारी याद साँसों में समाई है !
हो किधर तुम मल्लिका-रम्य तन्वंगी
रे कहाँ अब झलमलाता रूप सतरंगी
मधुमाती मद-सी तुम्हारी मोहिनी रमनीय छाई है !
मानवी प्रति कल्पना की कल्प-लतिका बन
कर गईं जीवन जवा-कुसुमों भरा उपवन
खो सभी, बस, मौन मन मन्दाकिनी हमने बहाई है !
हो किधर तुम सत्य, मेरी मोह-माया री
प्राण की आसावरी, सुख धूप-छाया री
राह जीवन की तुम्हारी चित्रसारी से सजाई है !

—

टूट गया

⊕ महावीर प्रसादसिंह 'माधव'

टूट गया सारा सपना ।
जीवन का मर्म न जाना, दुख सहकर दर्द न माना,
तब नीड़ छोड़ चला पंछी, जीवन का क्या कहना ?
टूट गया सारा सपना ।

जब सुमन खिला उपवन में, अलि का गुंजन गुलसन में,
र, जब चमन ही सूख गया, तब सुरभि-का क्या कहना,
टूट गया सारा सपना ।

आह, क्षश्रु बन कर निकला, मो आशा बनी फफोला
अब उसरिता हो वह निकली, धीरज का क्या कहना
टूट गया सारा सपना,

—

छाया है मधुमास

प्रो० महेश्वर प्रसाद सिंह,

यहाँ ऐसी वहार भी है !

रूप का दृग में भर आकाश, अधर में मुक्ताओं का हास,
चाँदनी निज सुध-बुध से हीन महकती प्रिय चन्दा के पासः
मगर तारे शबनम के अश्रु वहा कर कहते हैं चुपचाप
कि तेरे प्रणय-कुसुम में कीट अमा का अन्धकार भी है !
यहाँ ऐसी वहार भी है !

स्वांति-घर नभ में घिर घनघोर, बरसते झूम-झूम हर ओर,
बुझा कर धरती अपनी प्यास मगन अति है आनन्द विभोर,
मगर कहता डालों में डोल पपीहा होकर परम उदास
कि मेरे तृप्त कंठ में बसी वारि-कण की पुकार भी है ।
यहाँ ऐसी वहार भी है !

चीर कर शिशिर-गगन सोल्लास धरा पर छाया है मधुमास,
भ्रमर, पिक के चल रहे अवाध नवल, स्वर-लय के मधुर विलास,
मगर पल्लव तरुओं पर डोल पवन मिस फेंक रहे निःश्वास
कि मेरे इस प्रवाल रँग वीच पीत पतझर मजार भी है !
यहाँ ऐसी वहार भी है !

नहीं है सुख में तेरी जीत, नहीं है हार दुखों में मीत,
खेलना अश्रु-हास का खेल जगत की है यह अपनी रीत ;
नहीं वन सुख में हर्षित प्राण, नहीं कर दुख में मुख को म्लान
पल रहा अश्रु-हास से पूर्ण एक अभिनव दुलार भी है !
यहाँ ऐसी वहार भी है !

—

प्यार भी दो

⊕ महेश चन्द्र शर्मा वैद्य

मुझे ज्वार भी दो सरस प्यार भी दो
नयन की छटा से हृदय दो सजल का

प्रणय काल का निर्वसन अश्रु मुखरित
सावन विपन को गरल धार भी दो।

बढा हूं चला हूं, निरन्तर बढ़ूंगा
तिमिर नीड़ की झांकियाँ देखता हूं
कभी उर्मि के चुम्बनों की झड़ी में
अरे प्राण सागर पतवार भी दो।

मुझे तोड़ डाला विस्मृत जगत ने
अभी जो आधार पर सुधा की धरा था
यही विश्व मुझको लगा आज विषमय
जिसे प्यार की इक अलक में छला था

किनारे बहुत देखता आ रहा हूँ
अरे सिन्धु मुझको मझधार भी दो।
कितने सजाये नए रूप मैंने
मगर पुतलियों को सपन दे न पाया

मुझे क्या पता था वही चल बसेगा
जिसके लिए आज तक गीत गाया
यही सत्य छल है इसे क्यों न समझा
मृतिका ही लिखेगी मनुज की कहानी
सभी कुछ लुटाकर चलेगा यहाँ जो
उसे राह का कुछ आधार भी दो।

मुझे ज्वार भी दो सरस प्यार भी दो

समय

माखनलाल चतुर्वेदी

कहन ! समय का जी भर आया
आंखों में भर आयी कारा
वे ही क्षण थे जब तुमने था
पहले-पहले मुझे पुकारा !
शब्द यही थे
किन्तु अर्थ दौड़ा फिरता था।
छन बढ़ता था, छन चढ़ता था—
छन गिरता था।

नये चित्र लेने को जैसे
समय ठहर कर बोल रहा था।
अपने लेन्स मिलाने को वह
इधर-उधर-सा डोल रहा था।
वह यादों को पोंछ-पोंछ कर
उजली कर-कर टांग रहा था
द्रवता चुकी कि मेरे आंसू
किरण वस्त्र पर मांग रहा था !
मानो पिछले पाठ याद कर रहा
छात्र यह
आंखे मूंदे गतिगामी अनुराग मात्र यह !
जहां भूमि आकाश मिल रहे थे वह कोना
बना समय की मधुर चांदनी का सा दोना
चरण पखार, अर्चना लेकर
नभ उतरा काली जमीन पर।

—

प्रक्रिया बोध

● महेश जायसवाल

जीने की प्रक्रिया से अलग
तुम्हारी खोखली अनुभूतियाँ, निरर्थक
सन्दर्भहीन रेखाओं ने
डूबकर चीख-चीख कर
आत्म विज्ञापन करती हुई—
खो गई…………!
शून्य और महाकाय शून्य ?
तब फिर—
कैसे खालीपन भरता गया
'कहा था, धीमे-धीमें (पीठ पीछे)
काफी निकट से जुड़े व्यक्तित्वहीन व्यक्तियो ने
————'नीच कुत्सित
व्यक्तित्वहीन—नर'

—

कहाँ चलती जाती हो।

● माधव सिंह 'दीपक'

अपनी ज्योतिभरी आंखो को, श्रद्धा मे दिन रात झुकाए
मीरा सी तुम प्रेम-दिवानी, अपने प्रिय से प्रीत, लगाए
दीप शिखा मन्दिर में पूजा करनी जलती जाती हो।
जीवन की यह छाँह रुपहली, कचन जैसी देह सुनहली,
सग में साथी औ' न सहेली, पथ पर चलती एक अकेली,
कांटों का तो कहना ही क्या, फूलों से भी कतराती हो।
तेरा रूप निहार गगन में, चन्दा को भी नीद न आई,
लहरों में हिलती परछाई जब भी तू थोड़ी मुस्काई,
दुनियावालों की नजरो में, रूपसि ! क्यो खलती जाती हो।

—

दुःख में कोई काम न आया

⊕ मुक्ति नाथ त्रिपाठी

सुख में लाखों ने अपनाया,
दुःख में कोई काम न आया,
पथ में जिसके फुल बिछाया आज वही बन गया पराया।
जिस की आंखों के आँसू को, अपनी आँखों में जड़वाया,
पीड़ा, जिसके होठों से ले, अपने होठों पर मढ़वाया,
देख विवशता के आंगन में,
मुझ को पीड़ा, के नर्तन में,
उसने अपने यौवन में है, मुस्कानों का दिया जलाया।
आज न कोई संगी साथी, आज न कोई है हमराही,
आज हृदय में मेरे तड़पन, करती है अपनी मनचाही,
जिस पनघट को हास दिया था,
हास और मधुमास दिया था,
उस पनघट ने आज मुझे है, पनघट से प्यासा लौटाया।
सूनी सेज उमर की मेरी देख, बहार न सोने आई,
पतझर देख मिलन के आँगन, कोयल आज न गीत सुनाई,
जो बाहर थी सेज सजाती,
जो कोयल थी बीन बजाती,
आज उन्होंने देख विवशता, मुझको पावों से ठुकराया।
आज वेदना की महफिल में, बजती पीड़ा की शहनाई,
और हृदय पर पत्थर रखकर, देख रहा जग की कजलाई,
देख रहा हूं वक्त बदलना,
बिना सहारे जल में बहना,
ढूढ़ रहा हूं गली-गली में, राह-राह पर अपनी छाया।

—

मैं किसी के

○ मुरलीधर श्रीवास्तव 'शेखर'

मैं किसी के चरण चिह्नों पर न चलना चाहता हूँ
और पथ पर लीक अपनी खुद बनाना चाहता हूँ
दीप लेकर पथ मे कोई खड़ा मत हो, यहां पर
मैं सघन तम भेद कर भी राह पाना चाहता हूँ
मेघ गरजे तड़ित तड़पे नीर मूसलधार बरसे
मैं प्रलय की बाढ़ बन कर खुद उमड़ना चाहता हूँ।
क्यों डराता सिन्धु ! भीषण तुंग लहरों को उठाकर
नाव छोडो, तैर कर मैं पार जाना चाहता हूँ।
साथियो, मुझको न रोको और न पीछे से पुकारो
मैं अकेला आज मंजिल तक पहुँचना चाहता हूँ
राह फिसलन से भरी हो या कि कंकरीली कंटीली।
जब कदम ये उठ चुके हों, तब न रुकना चाहता हूँ,

यहां कचनर फूला है

⊕ भगवत पाण्डय 'सुधांशु'

[illegible]ाण, तुम गए भूल घर बार, यहां कचनार फूला है,
[illegible]हंसता मृदु फूलों का गांव, महकता सुरभि-परी का गान।
[illegible]गन करता है नयन पसार धरा के रूप सुधा का पान,
[illegible]ुकी अमवा की अरर डार, यहाँ कचनार फूला है।
विटप से कहती है चुपचाप नवेली लतिका उर की बात,
हवा पढ़ती है मोहन मत्र, सिहरते तरु के कोमलपात,
कोकिला बोले सौ-सौ बार, यहां कचनार फूला है।
[illegible] जाने लेकर कैसी पीर यहां आया है नव मधुमास।
[illegible]ुझे लगता ऐसा, ऋतुराज गया है नहीं तुम्हारे पास,
[illegible]ससकता मेरा बेकल प्यार यहां कचनार फूला है।
चांद की बिखरी है मुसकान उलझती उससे तरु की सांस,
जगी है मेरे दृग में मौन देव, तुमसे मिलने की आस
रंगा है सुधियों से भिनसार, यहां कचनार फूल[illegible]
गान, तुम गए भूल घर बार, यहां कचनार फू[illegible]

छलना

भगवती चरण 'निर्मोही'

बढ़ रही सब ओर छलना।

रे! दुखी मानव, तुझे प्रतिपल इसी के बीच चलना।

मूक रहकर आह भरकर,
चल सके जब तक चला चल।
बन्धु! यह मरुभूम इसमें,
पा सकेगा तू कहाँ जल।

मानवों ने मानवों को है यहां सीखा कुचलना। बढ़ रही...

पथिक रजनी भर यहां विश्राम,
इसका शोक क्या फिर।
भूल जा सपना समझ कर,
लौट कर क्या देखता फिर।

शोक करके हाथ आयेगा, बटोही हाथ मलना। बढ़ रही....

अश्रु रखना नयन में ही,
मत बहाना देख छल-छल।
सांत्वना पा व्यर्थ की तू,
पग शिथिल करना न डलमल।
ले हृदय में आग साथी, राह में है नित्य जलना॥

बढ़ रही सब ओर छलना।

—

जा तुझ को भी……

● भारत भूषण

मेरी नींद चुराने वाले जा तुझको भी नींद न आये !
पूनम वाला चांद तुझे भी सारी-सारी रात जगाये !

तुझे अकेले तन से अपने
बड़ी लगे अपनी ही शैया !
चित्र रुचे वह जिसमें चीर
हरण करता हो कुंवर कन्हैया !

बार-बार अचल सम्हालते तू रह-रह मन में झुंझलाये !
कभी घटा सी घिरे नयन में और कभी फागुन बौराये !

बरबस तेरी दृष्टि चुरा ले
कँगनी से कपोल के जोड़े !
पहले लो तोड़े गुलाब तू
फिर उसकी पंखुरियां तोड़े !

होठ थकें हां कहने में भी जब कोई आवाज लगाये !
चुभ-चुभ जाये सुई हाथ में धागा उलझ-उलझ रह जाये !

बेसुध बैठ कहीं धरती पर
तू हस्ताक्षर करे किसी के !
नये-नये सम्बोधन सोचे
डरी-डरी पहली पाती के !

'जिय बिनु देह नदी बिनु बारी' तेरा रोम रोम दुहराये !
ईश्वर करे हृदय में तेरे भी कोई सपना अंकुराये !

—

नवलकिशोरी—राधा

भोलानन्द मिश्र 'अमरेन्द्र'

मंजुल—वन की सुरभित–लतिका,
अलियों के गुंजन से विलुलित,
भाव तरंगित ओ अनुप्राणित,
सरस विश्व की चरम-चेतना को–
झंकृत कर,
सुन्दर राग आलाप रही है!
विश्व—भ्रमर के मन–मानस में,
राधा—रानी नाच रही है!!

उन्मन—उन्मन, गुञ्जन—गुंजित,
चपल—चपलतर, धवल—सौधतल,
नवल—वेष में,
राधा—रानी नाँच रही है!
नवल–किशोरी झाँक रही है!!

विश्व–भ्रमर की भाव–भामिनी,
सान्ध्य-वेल की अरुण—रागिनी,
गागरी–नागरी, नागरी–गागरी,
मुखरित–सरसति राग कल्पना!!

एक अलौकिक भाव—जल्पना!
वृन्द कुंज में, मधुर–मोह में,
विश्व गेह में अनुसारित हो,
दिव्य–ज्योति से तिमिर–धुन्ध को,
विस्फारित कर–
नवल–किशोरी झाँक रही है!!

—

बढ़े चलो

⊕ योगी नर्मदेश्वर पाण्डेय

बढ़े चलो तुम बढ़े चलो वीरो ! आगे बढ़ चलो।
पाक लुटेरो को लौटा दो, सीमा से उस पार भगा दो
ना माने समझाने पर भी तो तुम गोली मार सुला दो
दुश्मन पर तुम चढ़े चलो वीरो ! आगे बढ़े चलो।
नकचिपटो को मजा चखा दो, तुम फिर नरमेध मचा दो
नरमुण्डों का जयमाल बना भारत मां को रे पहना दो
लहू से नाला भरे चलो, वीरो ! आगे बढ़े चलो।

सिसकता था चांद मेरा ! ⊕ यदुनाथ पाण्डेय 'अश्रु'

मुस्कराती चांदनी में सिसकता था चांद मेरा,
कौन वह जग मे जिसे हो वेदनाओ ने न घेरा ?
उदर में बाड़व बसाकर, वक्ष पर औंधी लिटाकर
पागलों सा चूमता निधि चन्द्रिका को, सिर उठाकर
वायु नर्तन कर रही थी शशि-करों से कर मिलाकर
मत्त मदिरा थी पिलाई कुसुम ने केशर मिलाकर
पथिक में दिन की थकावट स्वत्व अपना खो रही थी
नीद रजनी के गले में बाँह डाले सो रही थी
पर मिलन की यामिनी में मूक था मधुमास मेरा,
मुस्कराती चाँदनी मे सिसकता था चांद मेरा ?
काव्य कवि में सो रहा था कल्पना की ओढ़ चादर
कंज-सम्पुट में छलकता था भ्रमर का भाव-आदर
पर्वतों की गोद में कल्लोलिनी थी किलकिलाती
पास के मधु-कुंज में अभिसारिका भी खिलखिलाती
रात्रि का इतिहास चुप-चुप श्वेत पृष्ठों ने लिखा था
विश्व का प्राङ्गण सुवासित स्वप्न-छलना से लिया था
किन्तु नयनों से किसी के ढुलकता था 'अश्रु' मेरा !
कौन वह जग में जिसे हो वेदनाओं ने न घेरा ?

उच्छाह

⊕ योगेन्द्र तुली 'अम्बुद'

रमणी दिवस कब आयेगा
जब स्वप्न सच बन जायेगा

ओ प्रीत की चिर चेतना
प्रिय मिलन की बस वेदना
मत तीर लोचन वेधना
हिरदय न मेरा छेदना

निर्मित भवन अकुलायेगा।

हे ! स्वप्न की अनुरंजना
सुन उद्वलित अभिव्यंजना
व्याकुल हूँ तुम बिन अङ्गना
बढ़ती है मेरी क्रन्दना

निखरत हृदय हरषायेगा

मुझको तेरी अन्वेषणा
बढ़ते हैं पग पा प्रेरणा
प्रिय मिलन की अभ्येषणा
मत व्यथित हृदय कुरेदना

रमणी दिवस कब आयेगा
जब स्वप्न सच बन जायेगा।

सूंघ गई संझैया

⊕ रघुनाथ प्रसाद घोष

दीये की कोख नही टिमकी
सूंघ गई सझैया रात ।

सोन विहग अभी-अभी मुड़ा
पच्छिम की खोली मे हुआ कहीं बन्द
अन्धी ढलानों से दरकी-सी रात
सोतों-सी पसर गई, भरमाई गंध

सतरंगिया सतरे अपूर
गल गया कनकिया परात ।

कुटनी की ताक फली, और
बिजुरी-सी चोर गई क्षण का आसंग
बिम्बों पर जनम गई मेंड़
उघर गई गहरायी भुरमुट की नंग

द्वार अभी रेख नहीं तनी
रूपायन की क्या बिसात !

फुटपाथी कंकड़ियों, पिछल
बियुर गई नियराई लिजलिजी दुपेर
मन पर क्षण अनाहूत अटका
भाऊ-सा सिमटायी पगथापों बेर

फटे नहीं सलवट पर रंग,
शायद हो काल की पिछात ।

—

हो सका है नहीं

⊕ रघुनाथ प्रसाद 'विकल'

सोचता हूँ—प्रचुर स्वप्न से जागरण
हो सका है नहीं, हो सकेगा नहीं !
स्वप्न टूटा अगर, स्वप्न की तारिका
रुक सकेगी नहीं, रुक सकेगी नहीं ।

जिन्दगी लड़खाती चली जा रही,
देखना है कि वह गिर न जाए कहीं ।
प्यार की थपकियां इसलिए मैं उसे
दे रहा था, न तव दे सकूंगा कभी !

मौत का यदि नियंत्रण मिला प्राण को
सह सकेगा न वह सत्य का आवरण !
इस लिए तो सदा प्राण में गूंजता,
स्वप्न झूठा नहीं, स्वप्न झूठा नहीं ।
प्यार की वर्तिका जो जली जल रही
स्नेह सूखा नहीं, नेह टूटा नहीं

मैं धरती से प्यार करूंगा

⊕ रघुनाथ 'प्रियदर्शी'

मुझे न नभ के गीत सुनाओ, मैं धरती से प्यार करूंगा ।
मेरे घर ऊषा ने आकर, फूलों की माला पहनाई,
कहा किसी ने तुम से पहले, सन्ध्या से हो गई सगाई ।
दहेज लिए आशा भी आई, मीठी-मीठी बात बनाने,
पीछे से पीड़ा आ बोली, मैं आई हूँ ब्याह रचाने ।
मैं न वरूंगा नई सुहागिन, विधवा का सिन्दूर भरूंगा ।
सतयुग का सतवादी मैंने, मरघट को जीवन-घट दीया ।
त्रेता का वनवासी मैंने, हर आँसू अमृत कर पीया ।
कौरव के अत्याचारों से, मैं पाण्डव अनजान नहीं हूँ ।
कलयुग से लड़ने आया हूँ, दो दिन का महमान नहीं हूँ ।
मुझे न सुविधा-सुरा पिलाओ, मैं काँटों की राह वरूंगा ।

तुम आये ही नहीं

⊕ रघुवीर शम

दिया जलता ही रहा तुम आये ही नही
बेबसी फैल रही चारों तरफ रात की तरह
तन-मन उसने लगी तनहाई मौत की तरह
अँधेरा बढ़ता रहा चांद निकला ही नही।
दिया जलता ही रहा तुम आये ही नहीं।
दिल की हर धड़कन आखिरी बनी जाती है
जाते-जाते भी जुदाई जलाये जाती है
दर्द बढ़ता ही रहा दम निकला ही नहीं
दिया जलता ही रहा तुम आये ही नही

—

आकाश तक उड़ान

⊕ रघुबीर सिन्ह

ये जुल्म जमी का है माथे पर,
आकाश में कैसे तुम जाओगे।
यूँ हम जो तड़पते हैं धरती पर,
तुम चैन वहाँ ना पाओगे।
आकाश की सीमा तुम लाँघ भी लो,
मन को तुम लाँघ ना पाओगे।
ये जुल्म जमी का है माथे पर,
आकाश मे कैसे तुम जाओगे।

एक दुर्घटना

⊕ रणधीर सिन्हा

नदी के कछार
उदास बैठे हैं
सिर झुकाए।
लहरें भरती हैं हिचकियाँ
रुक-रुक कर।
घड़ा भरने अभी तक
साँझ की ध्वनियाँ नहीं आयीं !

चारों ओर मातम छा रहा क्यों ?
अँधेरे का जाल
ऊसर खींचा जा रहा है।
भीड़ तारों की अब छितराने
लगी है।

हाँ, एक दुर्घटना हुई आज !
मझधार में डूबी अभी है
नाव,
घर लौटते ही
लाज बत्तियों वाली
दिन भर के थके-माँदे सूरज की।

—

है आराम हराम

⊕ रफत अधीर

कोटि-कोटि वीरों की भूमि भारत मेरा धाम
मैं धरती का संरक्षक हूँ सैनिक मेरा नाम

मैंने कदम बढ़ाए जब चट्टानों ने पथ छोड़ दिया
मैंने बढ़ते हुए समय के भीषण रथ को मोड़ दिया
मेरे गर्जन से जड़-चेतन में आई तरुणाई
मैंने तुंग शिखर पर चढ़कर विजय ध्वजा फहराई
मैंने दुनिया को सिखलाया है आराम हराम
मैं धरती का सरक्षक हूँ सनिक मेरा नाम

कभी न डरना सीखा मैंने आंधी और तूफान से
हार नहीं मानी है मैंने कभी वज्र पाषाण से
मैंने जब हुंकार भरी हिम-शिखर पिघलते चले गये
मेरे एक इशारे पर इतिहास बदलते चले गऐ
मैं युग-निर्माता हूँ परिवर्तन है मेरा काम
मैं धरती का सरक्षक हूँ सैनिक मेरा नाम

मैंने सीमा की रक्षा को रक्त दिया बलिदान दिया
मैंने अपनी फैक्टरियों में फौलादी निर्माण किया
मैंने ज्योति जलाई जग में साहस के नव गान की
मैं ही धरती पर लाया हूं पहली किरन विहान की
युगों-युगों से यही सुनाता आया हूँ पैगाम
मैं धरती का सरक्षक हूं सैनिक मेरा नाम।

—

जीवन का इतिहास यही है

कु० रमन शर्मा

कल जो था वह आज नहीं है,
जीवन का इतिहास यही है।

उजड़ा बसता, बसता उजड़े
विगड़ा बनता, बनता बिगड़े
निपटे कल जो, वे आज बढ़े
मेरे तेरे के, ये झगड़े
स्थिरता अपनी सौगात नहीं है
जीवन का इतिहास यही है।

सुख दुःख नहीं, किसी की थाती,
ये बाधा तो, आती जाती,
आज खुशी है, कल गम होंगे,
मान्य आज जो, कल भ्रम होंगे,
सच है यह परिहास नहीं है
जीवन का इतिहास यही है।

मत बहको, सुविधा पाकर तुम
मत तड़पो द्विविधा पाकर तुम
दुनिया नाम, बदलने का है
कदम मिलाकर, चलने का है
अपना तो विश्वास यही है
जीवन का इतिहास यही है

—

तीन

प्रणय निवेदन

⊕ रमाकान्त श्रीवास्तव

तुमसे ज्यादा प्रिय है मुझको अपना यह एकाकीपन
नश्वर का क्या साथ, साथ-
तो अविनश्वर का रहता
अन्त रहित आत्मा के पथ पर
थक शरीर वेदम सो रहता
नश्वर बाहों में कस कर तुम
करो नहीं यों प्रणय निवेदन
मिट्टी में मिलता है जिसको
उसके प्रति क्यों आकर्षण
तुमसे ज्यादा प्रिय है मुझको मुझे मिला जो प्यार सुपावन
कौन देश वह जहां कि होता
आत्मा का दिन रात सवरण
जहाँ देह यह पहुँच न पाती
वहुत चाहने पर भी मन

—

कहता हूँ कब, मत प्यार करो

⊕ डा० रमानाथ त्रिपाठी

भटके भटके, ऊपर नीचे, जैसे तैसे पग टकराये
झट शरमाये, फिर अतल वेदना – की छाया ले
दूर हुए।
यह दूर दूर की प्रीति-भली
मीठी मीठी कुछ टीस भरी नैनों की यह
आकुल विनती मत इसे वेच बरबाद करो
कहता हूँ कब मत प्यार करो

—

यातना

⊕ रमेश कुमार 'अनजान'

सोचता था सुखद यह संसार है,
किन्तु निर्धन हेतु कारागार है।
जगत सब दुख द्वन्द का आगार है,
नहीं जिसके निष्कमरण का द्वार है।
यन्त्रणायें मौन हो कब तक सहूं,
यातनायें विश्व की कब तक सहूँ।

जहां जन के स्वंस्व छीने वर्ग ने,
जहां मन के भाव कुचले दर्प ने।
जहां जन की विवशता पर विहंसता संसार है,
उस विवश उर की व्यथा का क्या कोई आधार है।
उस व्यथित उर की व्यथा कैसे कहूँ,
यातनायें, विश्व की कब तक सहूँ।

विफल सोकर, श्रमिक के जहां दृष्टि आते,
सफल शब्द वहीं धनिक दीख जाते।
विश्व क्या अभिमान करते निज प्रगति का,
यही कारण है बनी नर की कुगति का।
जगत की उस प्रगति को मैं क्या कहूं,
यातनायें विश्व की कब तक सहूं।

यातना बढ़ती गई औ कल्पना मृत हो गई,
कल्पना के साथ ही सारी, कलायें सो गईं।
साथ ही इस विश्व की सारी मधुरिमा खो गई,
आत्म पोषण ही मनुज की साधना बस हो गई।
शुष्क जीवन नीड़ में कैसे रहूं,
यातनायें विश्व की कब तक सहूं।

—

अमित-भ्रमर

⊕ योगेन्द्र तुली 'अम्बुद'

ओ मधुकर क्या तू गाता है
किसको निज तान सुनाता है ?
यह तो उपवन यहां नित्य अनेकों कलियां खिल मुरझाती है
श्रम कठिन करे वे खिलने का पर सकुचा कर रह जाती हैं
सिर धुन-धुनकर मनसिज तरग पा विधिगति वे सिहराती है
पानीहीन पानी में गौरव खोकर भी इठलाती हैं
अपने गायन के मधुर स्वरों से क्यों इनको खिसियाता है ?
किसको निज तान सुनाता है ।

—

सुनहले ख्वाब

⊕ योगेश चौबे

तुम्हीं सूरज तुम्ही ज्योति जहां को जगमगा देना,
वतन के एक आंसू पर हजारो सर कटा देना,
कि राखी की कही ये डोर ना टूटे ।
चलो कर्तव्य का दामन कही हाथो से ना छूटे ।।
चलो हिन्दू चलो मुस्लिम चलो ऐ सिक्ख इसाई ।
कही ये आंधियां मां के सुनहरे ख्वाब ना लूटे ।।

—

ज्वलन्त चित्र

⊕ रमेश जोशी 'मृदुल'

समस्याओं के कागज पर आवश्यकताओं की रेखा से
बना मेरा वह ज्वलन्त चित्र ।
धूप में गिरते हुये पानी से मेरे मित्र
गीली लकड़ियों के धुंए से पुती
मेरी पत्नी की मुखाकृति
फूंकनी पर उतरा हुआ क्रोध जब…जब…मैं देखता हूं
अनेक प्रश्न करता हूँ अपने आप से ।
और उत्तर न पाने की आवश्यकता में
जब जब मैं हँस देता हूँ—
लोग समझते हैं मैं बहुत सुखी हूँ,
लेकिन मैं कहता हूँ, लोग मुझे गलत समझते हैं ।

रूठ गई साधें

⊕ रमेश मालवीय

अरमानो संग आज होड़ में मैंने जीती बाजी हारी,
टूट गये स्वर, बीत गया युग, रूठ गयी साधें प्रिय सारी ।
तुमने हर पग पर कर डाली संभव थी जितनी परिभाषा,
मैं देखा करता सागर-तट लुटती मेरी सारी आशा,
कैसे झेलूँ हाय अकेले जगती के ये दुखड़े-भारी—
अरमानों सग आज होड़ में मैंने जीती बाजी हारी ।
ऐसा क्या कर डाला मैंने जीवन मुझको भार हो गया,
तिल भर को संतोष नहीं है दुश्मन तक हर-द्वार हो गया,
सांसे भी बोझिल हो आयीं दुनिया भरके दुख की मारी,
टूट गये स्वर बीत गया युग, रूठ गयीं साधें वे सारी ।
किस-किस से फरियाद नहीं की लेकिन सब अनकहा रह गया,
ज्यों लहर आकर जाती हैं वैसे ही मन-प्यार बह गया,
अब मुझको घनश्याम बुलालो, तुमने तो सब दुनिया तारी,
अरमानों संग आज होड़ में मैंने जीती बाजी हारी ।

राज बदले !

⊕ रमेश स्वर्ण 'अम्बर'

राज बदले न ये राजदार बदले,
लाश बदले मगर न मजार बदले ।
जब उठे आरज़ू के कदम भूल से,
उम्र टकरा गई हर खिले फूल से ।
बाग बदले मगर न बहार बदले,
राज बदले न ये राजदार बदले ।
देखते ही रहे हम चढ़ी धूप को,
आइना मर गया देख कर रूप को ।
हाट बदले मगर न बजार बदले,
राज बदले न ये राजदार बदले ।

—

टूटा व्यक्तित्व

⊕ रमेशचन्द्र गुप्त

मैं अनास्थावादी हूँ ।
जीवन के कटु सत्यों से टकरा कर
मेरी मान्यतायें बिखर गई हैं ।
नीति, प्रीति, प्रतीति अब शब्द मात्र है,
मूल्यों मे
जीवन के आदर्श बिक रहे हैं ।
और, मैं……शक्ति का प्रतिरूप
सिद्धान्तों के जर्जर मीनारों पर खड़ा हूँ,
उतरने में असमर्थ,
निस्संबल,
लगता है : जीवित नहीं, मरा हूँ ।

क्यों व्यर्थ दोष दूँ ?

रवीन्द्र 'पापी'

सागर को क्यों व्यर्थ दोष दूँ ?
सागर का क्या दोष, प्यास मेरी जब बुझा न पाई गागर !
मैं छोटा हूँ छोटों की बातें करता हूँ
बड़ी-बड़ी बातों से हासिल क्या होना है
अगर स्वप्न के ही पीछे दौड़ूँगा मैं तो;
सच में जो पाया है उसको भी खोना

अंबर को क्यों व्यर्थ दोष दूँ ?
अंबर का क्या दोष, न जब धरती ही दे पाई मुझको घर !
मैं जिसको; अपना जीवन कहते आया हूँ,
उसने मेरे जीने की हर आस छीन ली,
दुख के लाखों शूल चुभाकर गया हृदय में,
सुख की कलियाँ एक-एक कर सभी बीन ली,

तरुवर को क्यों व्यर्थ दोष दूँ ?
तरुवर का क्या दोष, न छाया दे पाये वे आँचल रखकर !
मिलन-गीत जब-जब भी गये, सुने ध्यान से,
आज विरह के गीत न उनसे सुनकर होते,
मैं भावों के पुष्प उन्हें देता आया हूँ,
क्यों न अभावों के ये काँटे चुनकर होते,

जगभर को क्यों व्यर्थ दोष दूँ ?
जगभर का क्या दोष, न मेरी पीड़ा समझी अपने होकर !
मैंने अपना समझ किसी को प्यार किया था,
पर कुछ समय साथ रहकर वह बिछड़ गया है
मन के उपवन में अभिलाषा की कलियाँ थीं;
पर बहार खोकर वह उपवन उजड़ गया है,

ईश्वर को क्यों व्यर्थ दोष दूँ ?
ईश्वर का क्या दोष, न मानव ही दे पाया जब कोई वर !

वीरता भी मान ले लोहा तुम्हारा

राजमल पवैया

सुभट तुमको है शपथ माँ भारती की,
शीश अपना देश पर हँस हँस चढ़ाओ।
विजय सकला ले रण बाँकुरी तुम,
युद्ध प्रांगण में चलो निज रथ बढ़ाओ।

धनुष प्रत्यंचा चढ़ा तूणीर से तुम,
तीर कुछ विष के बुझे ऐसे निकालो।
शीघ्र शर संधान करने शत्रु के,
वक्षस्थलों को एक क्षण में भेद डालो।

रण कुशलता विश्व में विख्यात है जो,
आज उसकी ध्वजा को ऊँचा उठाओ।

अग्निबाण चलें अगर तो सँभल कर तुम,
वरुण बाण चला त्वरित ज्वाला बुझाना;
नाग बाण चलें अगर तो धीरता से,
गरुण बाण चला उन्हें वापस भगाना।

शत्रु के सम्मुख स्वयं को वीरता से,
लौह की प्राचीर सा बनकर अड़ाओ।

मोहनास्त्र चला अभी तमसास्त्र फेंको,
और फिर पण्षास्त्र की बौछार करना।
चलाकर दिव्यास्त्र तत्क्षण पाशु पतले,
वज्र ले ब्रह्मास्त्र ले संहार करना।

मर्मभेदी शक्ति मारो मेघबाण चला,
अरे तुम गड़-गड़ाओ दड़-दड़ाओ।

शत्रुओं के शीश कट-कट गिरें भूपर,
चक्र तुम आवेग से ऐसे चलाना।
तीक्ष्ण भाले फेंक विकट त्रिशूल से तुम,
शत्रु को चिर मृत्यु की गोदी सुलाना।

आतताई धूर्त इन पाखंडियों को,
इस समर की भूमि में जीवित गड़ाओ।

न दोहराऊँगा

● राजपूत, अचल

पुरानी कहानी न दोहराऊँगा अब ।
तुम्ही ने जगाया, तुम्हीं ने सुलाया,
तुम्ही ने उपेक्षित किया, हिम बनाया,
न उच्छ्वास में ताप इतना बढ़ाओ
पिघल कर बहा तो भटक जाऊँगा अब ।
कुहासे घनेरे, न ढक लें सवेरे,
न पथ कामना को मिले लाख हेरे,
बहुत लालसाएँ बहकती रही हैं,
उषा के सपन में न बहलाऊँगा अब ।
न बाहें पसारो, न बंधन सँवारो
न भूले हुए गीत फिर से चितारो
भले शून्य पथ पर भटकता रहूँ मैं
तुम्हारी डगर पर नहीं आऊँगा अब ।
विजन को दुलारूँ, सितारे निहारूँ,
न धुंधला पड़ा चित्र कोई उभारूँ,
न तुम याद करना मुझे भूल कर भी,
न आघात मैं और सह पाऊँगा अब ।
पड़े रंग पीले, हुए तार ढीले,
रुँधे कण्ठ के गीत क्या हो सुरीले,
निमन्त्रण मुझे नेह लाख दो तुम
न भीगा हुआ गीत मैं गाऊँगा अब ।

—

माँ का स्वप्न सजायें

◎ राजकुमारी अग्निहोत्री

अब सजग हो उठा भारत का जन-मन है—
विकसित होंगी मंजिल की नयी दिशायें।

जिस अंधकार ने चाहा हमें मिटाना
कंस सदृश्य अभिमान गर्व ले लड़ना
लेकर बारूद जग साथ में अपने
चाहा है भारत-धरती अपनी करना

पर जाग उठी भारती सीम-रेखायें,
विकसित होंगी मंजिल की नयी दिशायें।

उसने समझा है हमको नहीं अभी तक
अब समझा है जब टैंक मिट गये सारे
कितनी साधों से सजा स्वप्न पाले थे
ढह गये सभी असमय ही हाय बिचारे !

कटने दो अब वैरी की सब युद्ध-भुजाएं
विकसित होंगी मंजिल की नयी दिशायें।

नापाकी दीपक अब बुझने वाला है
जिसका हमसे पड़ गया अभी पाला है
है आतुर मृत्यु बांह में उसको गहने
उसकी साधों पर पड़ी काल ज्वाला है

इस वेला मचल रही सूरज की किरणें
आओ हम भारत-मां-स्वप्न सजायें

अब सजग हो उठा भारत का जन-मन है
विकसित होगी मजिल की नयी दिशायें।

—

मैं एक अकिंचन गीतकार

⊕ राजेन्द्र 'अनल'

पर मेरी रसवन्ती वाणी बरसाती रस की सुधा धार
मैं एक अकिंचन गीतकार ।

जिसने ससार बनाया है, जिसकी यह सारी माया है,
उसके ही हाथों निर्मित यह मेरी माटी की काया है ।
निर्देशक तो पट के पीछे मैं रगमच का सूत्रधार,
मैं एक अकिंचन गीतकार ।

जब जन्म मिला सब सुखी हुए, माँ-बाप गये तो दुखी हुए,
हम सतत अभावों मे पलकर जीवन मे अन्तर्मुखी हुए ।
जब हुआ सत्य का दर्शन तब मैं कहलाया साहित्यकार,
मैं एक अकिंचन गीतकार ।

चट्टानों से टकराता हूँ, बादल दल पर उड जाता हूँ,
जब भाव तरगे उठती हैं मैं अलमस्ती मे गाता हूँ ।
मैं रहता सबसे अलग मगर छू पाया अभी न अहकार,
मैं एक अकिंचन गीतकार ।

धन-पद की मुझको चाह नहीं, जलने वालो से डाह नही,
जो पैर खींचने वाले है उनकी भी कुछ परवाह नही ।
मैं रत साहित्य-सृजन में हूँ वे हँसी उड़ाते बार-बार,
मैं एक अकिंचन गीतकार ।

जीवन में कभी न प्यार मिला, बस पीडा का उपहार मिला,
पर कवि होने के नाते सच कहने का है अधिकार मिला ।
है दर्द भरा मेरा जीवन मैं नवजीवन का गीतकार,
मैं एक अकिंचन गीतकार ।

—

डूब गया दिनमान

⊕ राजेन्द्र 'काजल'

आस का डूब गया दिनमान,
धुँधलके रह रह हुये जवान ।
सपने सियाह-पोश हो गये
सभी गुण मुझे दोष हो गये
साँस क्यों फिर भी है गतिमान ।
कलपने का कुछ महत्व नहीं
पास खाने को तत्व नहीं
शेष न है कोई अरमान ।
झील के मौन समर्पण सी
टूटते असमय दर्पण सी
जिन्दगी पीड़ा की महमान ।

पिया आ

⊕ राजेन्द्र 'च्यवन'

मेघा घिरे
मेहा झरे, नयन भरे
अमुआ की डालों पर बोल रहा पपिहरा,
पिया आ, पिया आ ।
बिजुरि बरे
जिया जरे, हिया डरे
बिरहा की बूंदों से प्राणों का ताल भरा,
पिया आ, पिया आ ।
पवन बहे
मन न रहे, तन न सहे
बैरिन रैन का थिरक रहा घाँघरा,
पिया आ, पिया आ ।

ओढ़ चुनरिया

⊕ राजेन्द्र 'निशेश'

हरे-हरे सपनो ने देखो, ओढ़ चुनरिया ली धानी है,
काले मेघों के टुकड़ों से बरस-बरस जाता पानी है।
अँधियारा आखो से झलके, मेघो का हर अँगुआ कड़के,
भर जाता जब रस का प्याला, मदिरा सा वह जल तब छलके।
बेदरदी बदरा ने देखो चातक की तो अब मानी है,
काले मेघों के टुकडो से बरस-बरस जाता पानी है।
उल्लासों की भीड़ लग रही, जिस द्वारे पर बजे बांसुरी,
विरहन का मन पड़ा बिलखता खिलती नही हृदय पांखुरी।
आंखों के निर्मल पानी की पीडा किसने पहचानी है ?
काले मेघों के टुकडें से बरस-बरस जाता पानी है।
आंख-मिचौनी की क्रीडा को नभ के मीत खुशी से खेलें,
कभी सितारे मुस्काते है मेघों के भी लगते मेले।
जिसके प्राणों का बल बढ़ता उसने निज चादर तानी है,
काले मेघो के टुकड़ों से बरस-बरस जाता पानी है।

एक हाइकू

⊕ राजेन्द्र स्नेह

कम्बख्त रेडियो ने भी
आज फिर वही गीत गाया
अखबार वाला भी आज
देर से आया
सुबह से ही
पोर-पोर चटक गई।

तुम्हें चाहता हूँ

⊜ राजेन्द्रसिंह चौहान

—ारा ! तुम कभी मेरे घर आ जातीं,
मैं खुश होता। पायल झनझनाती।
घर में दिल में, मन में, बस जातीं,
औरों के दिल में भी बस जातीं।
ओ प्रिये ! कुछ आते तुम्हें देखने,
मिलने से भी कुछ लगे तरसने।
कुछ मुझसे द्वेष मानते,
भाला, बन्दूक तानते।
कुछ चापलूस साथी आते,
महज दृष्टि तुम पर होती।
मैं। बिन बादल बरसात कराता,
रूप से, शरीर से प्यार लुटाता।
जब से तुम्हारा नाम सुना है,
व्यापक हो प्रिय आओ बहुत गुना है।
आओ न आओ तुम्हारा दीवाना,
पर मैंने तुम्हें कभी देखा नहीं।
तुम्हारे रूप से खेलते औरों को देखा है,
कब आओगी प्रिये !
पवित्र करोगी कब कुटिया यह मेरी।
प्रियवर ! जिसे मैं प्यार करता हूँ
तुम्हीं उसे ला मेरे हवाले करो।
इनाम मुँह माँगा मिलेगा।
नाम है उसका और उसकी बहन का।
अमीरी ! गरीबी !!

—

चांद और चांदनी

⊕ राजेश्वर मिश्र 'त्रिवेदी

दाग ले दर्द का चाँद रोया मगर
चांदनी भर निशा मुस्कराती रही
शून्य तट शान्त उल्का पतन पीर पर
नील तटिनी लहर ले मनाती रही
वर्ष बीते बहुत, सिन्धु तडपा किया
एक भी तो किरण पास आयी नही
कौन सी माधुरी उस अँगारे में है
खा चकोरी अभी कुछ बतायी नही
जब सुधा का समुन्दर खरा हो गया
तब गरल पीर का क्यो न ढाला सखे
चातकी जब शलभ से कहे भेद यह
दीप की लौ सुनो चोट खाती रही

—

बड़ा आदमी

⊕ राजेन्द्रप्रसाद त्रिवेदी 'राजेश'

ज्यो लीक काजर की
कामिनि की आखोमें लगकर रूप का निखार लाती है ।
उसकी मादक मोहक सुन्दरता, की शक्ति में एक ज्वार लाती है ।
वैसे ही काजर की कोठरी मे जाने पर,
मानस के मन-मोती की आव का पानी,
घटा नही दो अगुल बढ़ा ही है ।
सम्पदा और शक्ति मे कामिनि कांचन के योग से
घन की घटा छाई ही नहीं, रत्नों की वरसात भी आई है ।
और मनुष्य आदमी बन गया है ।
आज के भ्रष्टाचारी काले-बाजारी की तरह ।

राजेश दयालु 'राजेश'

~ ...र चाहता हूँ।
...त अमल मिल सका है,
...ा ऐसा कमल खिल सका है,
...सर जात अरविन्द-वर चाहता हूँ।
...मन क्या, न मन लेश मेरा भरा है।
गगन के निशानाथ में क्या धरा है।
धरा-चन्द्र आनन्द कर चाहता हूँ।
नदी में पड़ा विम्ब किस काम का है,
न अभिराम कुछ विम्ब आराम का है।
अछूते अनूठे अधर चाहता हूँ।
मिलन जीवन-ज्योति-घर चाहता हूँ।

—

चले जारहे हैं

राधाकृष्ण गुप्त 'चेतन'

उनके सहारे हम जिये जा रहे हैं,
उनके इशारों पर चले जा रहे हैं।
विरोधी छटायें, विरोधी हवायें,
तूफां जो आयें-बढ़े जा रहे हैं।
महकती हवायें, मचलती अदायें,
भड़कती सजायें सहे जा रहे हैं।
मासूम चेहरा, जुल्फों का सेहरा,
नयन-नीलिमा पर लुटे जा रहे हैं।
उनके सहारे हम जिये जा रहे हैं।

किसे प्यार से पूरा परिचय

⊕ राधेश्याम द्विवेदी

अपने आँसू की बूँदों से, नेह धूलि को करके गीला
प्रीति-घरोंदे कितने थोपे, जी बहलाने, खेली लीला
वे 'बालू भी भीत'-धसक कर, मिटे, लगा जैसे था अभिनय ?
अंग्रेजी पखुरियाँ थी वे तो गध नहीं थी, बस आकर्षण
मृग तृष्णा सा नीर झलकतीं, हो न सका कुण्ठा का तर्पण ?
मधु भावों की रही कल्पना, पर अभाव में गूँजे स्वर-लय ?
जीवन के अध्याय बहुत, पर, कौन छूसका प्रेमल रेखा
मन के तिनके उड़े कहाँ पर, मरु में भी हमने मधु लेखा
प्रवञ्चना विजयी होती हो तो हमको स्वीकार .पराजय !
जीवन-सरिता रही प्रवाहित, सागर तट की साध अभी भी
किसी जनम तो पाजायेंगे थकते डग विश्राम कभी भी
सत्य साधना एक अकेली जीवन मे बल भरती अक्षय ?
.........किसे प्यार से पूरा परिचय ?

नया वर्ष

⊕ राधेश्याम 'मुक्त'

नये वर्ष की गमकती कस्तूरी सी भोर
सूर्य किरण चन्दन की पालकी में आई है
गूँज उठी महुए के वन मे शहनाई है
मेंहदी की फुनगी पर सोलह अगराई है
फूलों में चहक रही चचल तरुणाई है
झीलो में छपकती हैं सोनी मछलियां
अम्बर में फैल गई सोनी बदलियां
उड़हूल भी दूर खडा हमको निहारता
अपनी लाली को नए वर्ष मे है सवारता
नये वर्ष की गमकती कस्तूरी सी भोर

करुण सपन

राधेश्याम शर्मा 'नीरद'

मिटती है मार्ग लीक
सूझता न सत्य ठीक
रात सा पर्दा गिरे पाँव भी सँभाल।
सरिता के बसनों पर
कमल के सुमनों पर
भ्रमरों संग नाच-नाच ताल-ताल।
तारों के हार पहन
गीतों के करुण सपन
पूछें आओ तनिक, चुप-चुप हाल चाल।

आँसू पोंछ लो तुम !

रामकृष्ण पालीवाल

प्रेम मेरे, किन्तु आंसू पोंछ लो तुम !
मानता हूँ आश की हर सांस तुमको छल रही है,
विश्वास की पतवार से आँधी भँवर की जल रही है।
जानता हूँ राह की परिचित दिशायें मात्र भ्रम हैं,
मनुहार की मोहक कलायें व्यंग का ही सहज क्रम हैं।
किन्तु टूटे तार को ही गाँठ देकर जोड़ लो तुम !
और आँसू पोंछ लो तुम !
मानता हूँ स्वप्न का सौभाग्य तेरा मचलता है,
मौन सुधियों का सरल संसार चुप-चुप सिसकता है।
जानता हूँ कारुणिक-क्रन्दन-जनित हैं हास्य तेरे,
नवल शोभनतम स्वरों पर विवशताओं के बसेरे।
शोक की अनुभूति को, श्लोक की अभिव्यक्ति दो तुम !
और आंसू पोंछ लो तुम !

कहते हुए लाज आती है

⊕ रामगोपाल परदेसी

अपने मन की बात आज यह कहते हुए लाज आती है
महाप्रलय हो जाती उनके जिस दिन देख नयन लेते हैं।
उनकी आँखें ऐसे जैसे
काली रात अमावस वाली
उनका रूप कि ऐसे जैसे-
कोई पूनम हो उजियाली
उनके बालों गालों पर है कैसा हाय गजब का जादू
हम ही नहीं अकेले उन पर सारी बस्ती है मतवाली
जिस दिन देख हमें लेते वे छिप-छिप कर अपने घूंघट से
उस दिन दर्पन में अपना ही बार-बार चुम्बन लेते हैं।
गोरी-गोरी देह सलौनी
चंदा देख जिसे छिप जाता
पतझर में खिलते फूलों सी
मन जो देख उन्हें बौराता
उनके अंग-अंग में हरदम लेता है यौवन अंगड़ाई
उतना ध्यान अधिक आता है जितना कोई ध्यान हटाता
उस दिन अपना नाम तलक भी याद नहीं रहता है हमको
जिस दिन इन हाथों से उनका थाम कि हम दामन लेते हैं।
जिधर उठाते नजर उधर ही
छा जाती है शोख बहारें
जिधर मोड़ते पीठ उधर ही
बढ़ जाती हैं चीख पुकारें
ऐसे मन के बादशाह वे कोई असर नहीं होता है
अगर न आये मन में तो फिर लाख कहो पर नहीं निहारें
पल दो पल क्या उस दिन तो हम सारे दिवस महकते रहते
सपनों में उनके जूड़े के जिस दिन सूंघ सुमन लेते हैं।

जीवन ! ऐहौ कौन काज ?

रामगोपाल मिश्र

जीवन ऐ हौ कौन काज।
पीरित हिय पै बिखर परे ना,
धीरज बन जो आग।
जीवन ! ऐहौ कौन काज ?

दीन हीन की आस बने, ना
दुखियन के सुख साज।
जीवन ! ऐहौ कौन काज ?

क्रूर समाज के फन्द नजारे,
मिटे न कुटिल रिवाज।
जीवन ! ऐहौ कौन काज ?

नैनहीन की जोति बने ना,
ना निर्बल की लाज।
जीवन ! ऐहौ कौन काज ?

'रामगोपाल', कृष्ण मूरति प्रभु,
बड़े गरीब नवाज।
जीवन ! ऐहौ कौन काज ?

—

इन्द्र धनुषी रंग मेरे

⊕ रामगोपाल शर्मा 'दिनेश'

धुल गए हिम—जल कणों से,
इन्द्रधनुषी रंग मेरे ।

कितने मधुर अभिशाप संचित,
आँसुओं में घुल गए ।
कितने मदिर अवसाद अविदित,
इन दृगों से ढल गए ।

पलक पुलिनों पर सकेंगे,
रह न आकुल प्राण मेरे ।
धुल गए हिम—जल कणों से,
इन्द्रधनुषी रंग मेरे ।

तिमिर-पट पर मधुर स्मित से,
चित्र चित्रित कर चले ।
इस सिहरती यामिनी में,
स्वप्न घन बन घिर चले ।

कौन सा चिर चित्र बन कब,
फिर मिलेंगे हे चितेरे ।
धुल गए हिम—जल कणों से,
इन्द्र-धनुषी रंग मेरे ।

—

आओ नव निर्माण करो

रामचन्द्र वर्मा

नये देश को नये वेश दो, नव निर्माण करो,
आओ, नव निर्माण करो ।

अब तो अपनी ही धरती है,
अपना ही है अम्बर—
अब तो अपना प्रहरी हिमगिरि
अपना रक्षक सागर—
अपनी नदियों में वहता जल, अपने झरने चंचल,
तुम इनको गति दो, जीवन दो, इनमें प्राण भरो ।

किसी विजन कोने में कोई
कलिका मुरझ न जाये—
मधु ऋतु आये ऐसा मत हो
उपवन देख न पाये—
दिशा-दिशा में सौरभ लहरे, कोकिल का स्वर विचरे,
तुम मकरन्द लुटाओ, जन-जन पीड़ा-बाण हरो ।

चन्दन की शीतल छाया में
सच हो सपने सारे—
श्रम की महिमा के आगे
सब शाप-ताप हैं हारे—
नव प्रभात में नवल गीत गा रहे विहग-वैतालिक,
नवल प्रेरणा लेकर तुम नव सृष्टि-विधान धरो ।
नये देश को नये वेश दो, नव निर्माण करो,
आओ नव निर्माण करो ।

—

आहट

⊕ रामदेव झा

तुम मुझे देखो, छुओ, कसो,
मैं ठिकरा नहीं, सोना हूँ !
औरों को मत देखो–उनकी आँखों में धुन्ध छा गया है;
तुम अपने ही को नई ज्योति और अनुभूति से भरो—
फिर मैं कल का खरा सोना आज ही तुम्हारे हाथ हूँ ।
काल-चक्र ने मुझमे नई गति भर दी है—
और मैं कल उगने वाले सूरज और चांद की किरणों का अगुआ हूँ
मैं जो आज हूँ कल नही हूँगा
और आज जो तुमने मुझे देखा, छुआ और कसा—
तो कल तुम्हारा भी रथ हवा में उड़ेगा ।

—

बोल नए सपने

⊕ डा० रामधारीसिंह 'दिनकर'

कहानी ! बोल नए सपने
अरी अभागिन, पहले ही क्यों
ओठ लगे कँपने !
देख लो,
प्राण में एक तूफान-सा
लोटता-सा चला जा रहा है कहां ?
व्यक्ति-वामन उठा आ रहा पैर ले
एक रक्खे यहां, एक रक्खे वहां ।
शृङ्खला सागरी को पिन्हाता हुआ
गगन खेल घर का बनाता हुआ ।
पख खोल अपने !
कहानी ! बोल नये सपने !

—

पतवार देदो

⊕ राम निवास शर्मा 'मयंक'

आख़ीर तक चलूंगा अगर साथ दे दो,
पार हो जाऊंगा अगर पतवार दे दो।

चला जब तक नभ दीप जगमगा रहे थे,
शशी मे तुम ही छुपे मुस्करा रहे थे, ।
बीत गई काल निशा सबेरा हो गया है
जग गये वो तूफान जो अलसा रहे थे।

अपने ही करों से हृयद का प्यार दे दो,
प्राण बच जायेगें अगर झंकार दे दो।

मैं लिए चलता हूँ प्राणों को उठाये,
ज्वार के भाल पर कदम मैने बढ़ायें।
बढ रहा हूँ जलती नि:श्वास को ले मैं
विकराल तूफान भी न मुझे रोक पायें

निज प्राण के विश्वास को हुंकार दे दो,
नाम की हर ज्वार को प्रतिकार दे दो।

बढ़ रहा हूँ मैं विश्वास को ले तेरे,
आरहा है खुश का किनारा पास मेरे
छोड़ आया दुख से भरी दुनिया पीछे
पा सकूंगा पुनः आज खोये सांस मेरे।

स्वप्न दो पर सत्य का आधार दे दो,
कल्पना को रूप तुम साकार दे दो।

—

याद प्रिय की झिलमिलाई

रामबाबू सेंगर 'पथिक'

आज टूटे आँसुओं में याद प्रिय की झिलमिलाई।

दीप की लौ-सा हृदय बहता न जाने किस दिशा में,
प्राण का आलोक बन्दी नमित पलकों की दिशा में,
टिमटिमा कर बादलों की गोद में सोये सितारे,
रह गये निश्चल पड़े मन के अधूरे चाव सारे,
मर गये सपने ठिठुर कर, साँस मुखरित हो न पाई।

कांपती है तरल सिसकी, वेदना से व्यग्र है मुख,
शिशिर ऋतु की धूप जैसा खिल न पाया मिट गया सुख,
धूल-सी उठती निराशा प्राण-मन पर छा गई है,
चेतना का पथ निरखते, आँख भी पथरा गई है,
और अँधियारी धुएँ के बादलों-सी आज छाई।

कह गया हर पल किसी के आगमन की बात, पागल,
स्निग्ध अन्तर भावना सोई न सारी रात, पागल,
साधना का दीप ज्योतित ले अचल विश्वास जागा,
मूर्ति मुझसे दूर मेरा आरती से प्यार जागा,

पर न आशा भूल कर दिनमान जैसी मुस्कराई,
आज टूटे आँसुओं में याद प्रिय को झिलमिलाई ॥

—

प्रणय पुष्प

⊕ रामवचन द्विवेदी 'अरविन्द'

जीवन का साथी त्रिभुवन में,
चुन कर जिसे बनाया था,
स्नेह-सुधा से सींच-सींच कर,
जिसको आह ! बढ़ाया था ।
जिसकी मृदु मुसकान सरलता,
पर सर्वस्व चढ़ाया था,
छाया सा पीछे फिर-फिर कर,
गान मनोहर गाया था ।
तोड़ लिया वह प्रणय-पुष्प क्यों ऐ रे निर्मल माली क्रूर,
किसे व्यथा की कथा सुनाऊँ हृदय हो गया चकनाचूर ।

—

वैधव्याभिशाप से

⊕ रामविशाल शर्मा 'विशाल'

गिरी लता सी दीन-हीन-
जर्जर अभिशापित,
चन्द्र-ग्रहण सी घिरी लिये-
आशा अनुतापित ।
मेरु-शिखर की खण्ड-शिला-
सी पड़ी हता शित,
पूजित हो युग-युग से-
विधवे ! आज अनादृत ।

—

गूँज उठी......

रामस्वरूप खरे

छम-छम-छम-छनन-छनन गूँज उठी पायलिया !

जियरा ललचा गया,
हियरा सकुचा गया,
अँचरा लहरा गया,
मुखड़ा पियरा गया।
करके मधु-प्रीति, मीत, आये न साँवलिया,
छम-छम-छम-छनन-छनन, गूँज उठी पायलिया।

भौंरा लख सनक उठे,
छौरा सब वहक उठे।
मनवा में कसक उठे,
अंग-अंग लचक उठे।
अमवा पै बोल उठी, कारी कोयलिया
छम-छम-छम, छनन-छनन गूँज उठी पायलिया

धरती पै छाये घन,
थिरक उठा नव-यौवन।
सुन-सुन मुरली की धुन,
नाच उठा मोरा मन।
चन्दा ढिग छाई रे प्यारी बादलिया,
छम-छम-छम छनन-छनन, गूँज उठी पायलिया।

—

जियो और जीने दो

⊖ रामसकल ठाकुर 'विद्यार्थी'

जीवन से घबराने वाले गीत गगन का गाने वाले,
जीवन है सग्राम, समझ लो, यह कोई खिलवाड़ नही है ।

यौवन मे कितनी आंधी है
जीवन में कितनी बरसातें
कितने सुन्दर प्रात छिपे है
कितनी काली-काली रातें

नव वसन्त की डाली लेकर ये बूढे पतझार खड़े है,
जो थोड़ी ज्वाला मे सूखे वह तो पारावार नहीं है ।

उन राहो पर शूल बिछाकर
तुम कहते, यह राह सरल है,
ओ अमृत के प्याले, बोलो,
सचित किसके लिये गरल है ?

जिये और जीने दो सबको, जीने की हर कला जान लो,
अपने हित जीने वालों को जीने का अधिकार नही है ।

खीच रही है पागल मन को
पाटल की सुधियाँ मन मानी,
माँग रही है प्यारी धरती
प्यारे जीवन की कुर्बानी,

अपने गरम लहू से अपनी माता का सिन्दूर सँवारो,
वह मिट्टी बेकार कि जिसको मिट्टी से ही प्यार नही है ।

—

ऐसा साथ निभाओ

रामसेवक शर्मा

जीवन भार हुआ है मेरा कैसे साथ निभाओ चलके,
ऐसा साथ गहो तुम जाकर जिससे उमर सहज कटजाये।

ाव वद्ध जो लिखे दुखों को तुमने उसको गीत बताया,
जो दो-चार चला पथ संग में तुमने अपना मीत बनाया।
धूल-धूसरित तन है मेरा और तुम्हारी कंचन काया,
जीवन निधि खो बैठा अपनी तुमने है सुख वैभव पाया।

मेरा भाग्य कहां जो तुमसे इस जीवन में होड़ करूं जो,
ऐसा साथ गहो तुम जाके जिससे डगर सहज कट जाये।

तुम डूबे हो जब सागर में हर अजलि मोती भर लाई,
मैं डूबा हूँ जब भी जाके केवल साथ निराशा आई।
उषा बिखरे द्वार तुम्हारे नित दिन आकर के फूलों को,
वही उषा आ द्वार हमारे बिखरा जाती है शूलों को।
कैसे साथ निभेगा जग में जब अपनी ऐसी राहें हैं,
ऐसा साथ गहो तुम जाके जिससे सफर सहज कट जाये।

पास नहीं है कुछ भी ऐसा जिसको मैं तुमको दे डालूँ,
और उसी देने के बदले तुमसे भी आखिर कुछ पालूँ।
अन्धकार में भटक रहा हूँ धूमिल दृष्टि हुई जाती है,
जब कि दृष्टि है पास तुम्हारे नई किरण आती-जाती है।
महा शून्य हूँ केवल मैं तो मत विश्वास करो तुम मेरा,
ऐसा साथ गहो तुम जाके जिससे तिमिर सहज कटजाये।

—

तीन सं

पहली वर्षा

⊕ पोद्दार रामावतार 'अरुण'

सन-सन पवन, मसूरी-पथ पर धूप मलमली
मध्य जून की साँझ पहाड़ी छाँह साँवली
गिरि के पार सूर्य, पर शिखरों पर रंगीनी
हरित-नील, पीताभ दिशायें भीनी-भीनी।
ऊँचे-नीचे मालरोड पर युवक-युवतियाँ—
भ्रमणमयी, उड़ती ज्यों चकमक विहग विहगियाँ
एक मील की लम्बाई में प्रिय पग-लीला
कुछ घड़ियों के लिए स्वर्ग-सा सुख चमकीला।
अनगिन विद्युत के प्रकाश से खिली मसूरी
तय करने में मैं निमग्न शृङ्गों की दूरी
शिखर-पन्थ में ही सहसा आँधी-सी आई
बुझी बत्तियाँ, चारों ओर घटायें छाईं।
महावात, गर्जन-तर्जन, घन-विद्युत-नर्तन
पर्वत के नीचे-ऊपर विटपों का कम्पन
पहली वर्षा राह रोकती शैल-सरणि पर
भीग रहा मैं देवदारु-छाया में थर-थर।

डिगने लगा विश्वास

⊕ रामेश्वर माहेश्वरी

अब तक मैं विश्वास करता था कि
प्रकाश में जो कुछ दिखता है वही केवल सत्य है।
मगर आज मैंने जाना कि घटित जो
अन्धकार में होता है वह यथार्थ है।
तो डिगने लगा विश्वास मेरा पुराना।
और लगा कि अब तक मैंने सत्य को नहीं
सत्य की लकीर मात्र को जाना है, पहचाना है।

आशा

● रामेश्वरप्रसाद सिंह

खजूर का पेड़ है आशा,
जिन्दगी के रेगिस्तान में,
छांव में जिसकी दो छिन विरम लेता हूं ।
बागो-बहार की बात—
यहाँ शश-शृङ्ग हैं, कूर्म-रोम है ।
इन्द्र धनुषी चादर यहाँ—
बादलों की नहीं तनती,
मादन सुरभि यहाँ फूलों की नहीं मिलती ।
एकटक सितारों की उनींदी पलकों में
परियों की कहानियाँ पिघलती हैं
बेकाम कल्पना के पैरों की पायल झमकती हैं ।
अथ और इति की यह मेड है,
आशा खजूर का पेड़ है ।

जन्म भूमि के भविष्य जागो

● रुद्रदत्त दुबे 'करुण'

उठो जवानो आग लगादो अरि के शास्त्रागारों में,
भारत मां के आंचल की अब लाज तुम्हारे हाथों में ।
जागो हे रणवीर चीर दो दुश्मन की छाती बढ़कर,
दफना दो जिन्दा उनको पाटो धरती को लाशों में ।
आज हर बहिन की लाज है तुम्हारे हाथों में,
आज हर कली की आन है तुम्हारे हाथों में ।
आज हर वधू की मांग है तुम्हारे हाथों में,
आज वीरता की शान है, तुम्हारे हाथों में ।
जागो कर शंखनाद. करदो अपना प्रहार ।

दो चांद

⊕ र 'रमा'

किसकी मानूं बात न कुछ भी निर्णय कर
उलझन बढ़ती ही जाती है जितना सुलभ
यह सच है दोनों की चाहें मुझको चाह
पास बुलाने को वे अपनी फैला बाँह
दोनों जीवन में क्रम-क्रम से मे
मेरे मन की जान मन की बात स—बता रह ह ।
दोनों ने आँखो के तम को चोर प्रकाश दिया है,
चूम अधर पखुरिया मेरी मधुमय हास दिया है ।
एक हृदय किसको दूँ किससे कहूँ न आस लगाओ
किससे कहूँ हंसी किससे कह दूँ तुम अश्रु बहाओ
एक चांद अम्बर से कहता पास हमारे आओ
एक चांद धरती से कहता छोड न मुझको जाओ

मेरा साथ निभाना

⊕ लक्ष्मीनारायण गोयल 'निरा

हार प्यार की, जीत न बन्धन की देखो हो जाए,
इसीलिए केवल कहता हूँ, मेरा साथ निभाना ।
वैसे तो मैं एकाकी चलने का भी अभ्यासी,
नहीं वासना मेरी तेरे यौवन की है प्यासी,
किन्तु न जाने फिर भी क्या इस मन का तुमसे नाता,
हर क्षण रहता है यह तुमसे मिलने को अभिलाषी,
हार चाँद की, जीत न रजनी की देखो हो जाये,
इसीलिए केवल कहता हूँ, निशि-भर दीप जलाना ।
कल तक जो अपना होने का दम थे पल-पल भरते,
आज उन्हीं ने देखो हम दोनों को है बिसराया,
कल तक जो अपनी खुशियों को ही थे जीवन कहते,
आज उन्हीं ने तन, मन, खुशियों पर पहरा बिठलाया,
जग तो बना हुआ है पागल, लेकिन देखो साथी
साथ न मेरा छोड़ तुम भी, संग जग के मिल जाना

दमयंती !

लक्ष्मीनाराण चौरसिया

ओ रे दर्दीले गीतों का राजहंस तेरे आँगन उतरेगा,
ओ री दमयन्ती ! तेरे दूध धुले नयनों का काजल सिसकेगा ।

सुधियों के लजीले ओस कण में,
तेरे चेहरे की उषा भीगेगी ।
गङ्गा जमुनी आँसू धारा में—
नयनों की अमावस डूबेगी ।

मैला हो जाएगा धानी आँचल,
मुश्किल हो जायेगा हर पल, ।

जब स्मृतियों की बौराई अमराई का कोना कोना महकेगा,
ओ री दमयन्ती ! तेरे दूध धुले नयनों का काजल सिसकेगा ।

जो भी पाया तुम्हें समर्पित,
भेज रहा हूँ सौगात पीर की ।
एक-एक अक्षर में संचित—
सौ-सौ गागर खारे नीर की ।

पाती पढ़कर न दुखी होना,
होकर रहता जो होता होना

जब कामना के नूपुर की रुनझुन में संयत तप बहकेगा
ओ री दमयन्ती ! तेरे दूध धुले नयनों का काजल सिसकेगा ।

तेरा विरह दूना हो जायगा,
यादों के झिलमिल मेले में ।
तृष्णाओं के सौदागर मोहेंगे,
आनन में देख अकेले में ।

ठगेगी मिलन क्षणों की माया,
शरमाएगी तेरी कंचन काया ।

जब रोज सवेरे मेरी व्यथा लिए सूरज का रथ निकलेगा,
ओ री दमयन्ती ! तेरे दूध धुले नयनों का काजल सिसकेगा ।

स्वदेश-वंदना

⊕ लक्ष्मीप्रसाद मिस्त्री 'रमा'

हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ।

सिर पर हिमगिरि मुकट विराजै, लख लाजत उपमान,
चरण पखारै हिन्द पयोनिधि, कीरति विदित जहान,
किंकणी विन्ध्याचल सुखदान, हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ।

कुंजे कलित निकुंजे मंजुल, चन्दन सा उद्यान,
विकमी वन-उपवन की शोभा, करतें खग कलगान,
अनुपम शोभाओं की खान, हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ।

ऋषि-मुनियों का पूजनीय यह, देवों का इस्थान,
बहती 'कलि के पाप विनाशन हित गंगे सरितान,
धरा पर है सुरलोक समान, हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ।

राम-कृष्ण-अर्जुन से योधा, प्रकटे जहाँ महान,
लछमन और भरत भ्राता, सीता सती सुजान,
सैन्यपति हुये भीष्म बलवान, हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ।

रघु-दिलीप-अज-अरु दशरथ से, हुये भूप प्रणवान,
रक्षक बन जिनने सुरेश का, सुरपुर किया पयान,
उन्हीं वीरों के हम सन्तान, हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ।

नहीं मशीन गनों से डर है, चाहे हो अवसान,
सत्य-अहिंसा-धर्म गहे ही, देंगे इसपर जान,
निकालें-चीन-पाक-अरमान, हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ।

भए इसी में-पले इसी में, तजें इसी में प्रान,
इसका दुखड़ा टार-करेंगे सुख स्वराज हम पान,
'लक्ष्मी' हमें भी तो इन्सान, हमारा प्यारा हिन्दुस्तान ।

प्यार-गीत

⊕ वंशीधर प्रसाद वर्मा,'सुधाकर'

प्यार का दीपक उर-थाल में,
प्यार-स्नेह से निरन्तर जल रहा है,
प्यार-प्रकाश से उर होता है प्रकाशित,
प्यार-प्रकाश हो प्रतिपल रहा है।
युग युग तक जलेगा प्यार-दीपक,
चाहे जीवन में तूफान आये,
प्यार का दीपक सदा जलता रहेगा,
प्यार-ज्योति से सदा जगमगाए।

—

उस जवान की

⊕ व्रजनन्दन पाठक 'प्राणेश'

जिसने हँस-हँस प्यार किया है ?
आज देश की पुण्य भूमि पर—
श्रम-सरिता से सिंचन कर,
शृङ्गार किया है, स्वदेश को प्यार किया है।
उस जवान की जय हो! जय हो!!

—

पात झरे

⊕ वसन्त

पतझर में पात झरे पीले।
अनजाने सपनों ने जाने क्यों करवट ली,
मन पर भी डाल गए अनचीन्ही सलवट सी।
निंदियारी अँखियों से बरसे बन गीले,
पतझर में पात झरे पीले।

—

आ जगाया

● विजय कुलश्रेष्ठ

रात ने बांटी उमर जब तारकों को, सो गया मैं,
भोर की पहली किरन ने आ जगाया।
हैं सभी मदहोश, कोई भी न जगता
रात भर मचली हवायें रुक रही हैं
भोर है, पर क्या करेगी किरन आकर
रतजगे के बाद पलकें झुक रही हैं
रातभर महकी गमक जब पायलों की थक गया मैं,
अनहुई परछाइयों ने सिर लगाया।
स्वप्न सी यह रात, रंगीनी, रवानी
बहक जाने की, न रुकने की कहानी
खुद लुटाकर झूम जाने की शिकायत
मदभरी खामोशियाँ सी यह जवानी
गीत ने मांगी कसक जब दो दिलों की कह गया मैं,
दर्द की पहली लहर ने सब सुझाया।
हो चुके पत्थर, मगर फिर भी किसी का
एक आश्रय हूँ-उन्हें पहचानता हूँ
जिस किरन के साथ जागा रातभर मैं
आज अन्तिम बार पाना चाहता हूँ
हृदय छूआ किसी क्षण तार कोई कंप गया स्वर,
अधर ने पहले पहल कुछ गुनगुनाया।
मत अभी छेड़ो कि सोते हैं इरादे
जग न जायें नींद कच्ची जानता हूँ
इसलिये सारी उमर यों जागकर ही
दो क्षणों का दर्द सब से मांगता हूँ
भ्रमर ने बांटी महक है क्यारियों को नत हुआ मैं,
शूल ने आकर दरद का खत पढ़ाया।

सपनों को तुम दफना दो !

○ विनोद कुमार 'भारद्वाज'

मत आंखों में आँसू लाना !

तुमसे मैंने प्यार किया है,
सब कुछ अपना तुम्हें दिया है,
अब न मुझे और रुलाना !
मत आंखों में आँसू लाना !

अर्पित है तुमको यह तन-मन,
तुम हो हो मेरा जीवन,
पर नहीं दर्द को और बढ़ाना !
मत आंखों में आँसू लाना !

यह आँसू दर्दीले गीत बनेंगे,
व्यथा भरा सङ्गीत बनेंगे,
व्यर्थ न अब तुम नीर बहाना !
मत आंखों में आँसू लाना !

मधुर क्षणों को आज भुला दो,
मीठे सपनों को तुम दफना दो,
मेरी दुनिया में अब कभी न आना !
मत आंखों में आँसू लाना !

—

स्नेह सौरभ

कु० विजया गड़वे

जिन्दगी के प्रथम क्षण मे,
स्नेह के सुरभित सुमन मे ।
तार टूटे जोड़ मैंने—
रूप ये नूतन दिया है,
स्नेह-रस मैंने पिया है ।

भाव की स्निग्धता ले—
लगन की बाती तरल की ।
प्रेम का पथ जा विकट है,
राह भी उसकी सरल की ।
प्रेम का दीपक जलाने,
गरल को घुट-घुट पिया है,
स्नेह रस मैंने पिया है ।

कूल का होगा मिलन जब,
स्नेह के चचल लहर से ।
शूल मे भी फूल खिलते,
गूंजता स्वर हर डगर से ।
उन सुहाने मद भरे क्षण—
मे बसेरा भी किया है,
स्नेह रस मैंने पिया है ।

चांद हँसता जब गगन में,
तारिकायें मुसकरातीं ।
डोलता शीतल पवन तब,
मिलन के मधु गीत गाती ।
गान के पावन स्वरो से,
मर्म अपना ही छुआ है,
स्नेह-रस मैंने पिया ।

बांधलो

विजेन्द्र नारायण सिंह

अगुरु-धूम उमड़ घुमड़ मन-प्राण हरषे,
रूप-राशि दो बिखेर प्राण-पुलक सरसे।
तड़ित्-वल्व को चला गर्म-ओष्ठ चूमने,
साँस मिली सांस में, प्राण लगे झूमने,
प्रेयसि अब बांध लो।
आज नहीं और चाह नयन-वाण साध लो।
युग-नद्ध रूप में सागर में नमक-सा, आन प्रिये। आँकलो।
मन में तूफान है, तन में हैवान है,
आज प्रिये खिड़की से आंधी को झाँकलो।

—

तब साथ

विद्याभास्कर वाजपेयी

तब साथ मुझे देना साथी।
मानस सागर की उद्वेलित उत्ताल तरंगे साथ न दें,
हिमगिरि सा मेरा धैर्य अटल ठुकराकर मेरा साथ न दे,
जब बुद्धि विवेक विचार न दे यह युक्ति हमारा साथ न दे,
बलवान कलेवर भी मेरा साहस पौरुष भी साथ न दे,
जब हृदय हमारा साथ न दे तब साथ मुझे देना साथी।
अभिमान हमारा झुक जाये सम्मान हमारा साथ न दे,
अन्तर की पीड़ा जग जाये रोकर आहें भी साथ न दें,
पग में कांटे भी चुभ जायें पथ के रोड़े भी साथ न दें,
हाथों का सुघर सलोना-सा संसार हमारा साथ न दे,
जब भाग्य हमारा साथ न दे तब साथ मुझे देना साथी।

—

सुनहले ख्वाब

● विद्याभूषण मिश्र 'मयंक'

न जाने नयन क्यों ? बहे जा रहे है ।

मधुर यामिनी कह गई क्या कहानी
उषा रूपसि की मचलती जवानी ।
उठे झूम सरसिज मगन कुंज मधुकर,
गये ओस कण छोड़ अपनी निशानी ।

भीगे नयन चचु खोले विगग,
नीड़ से तोड़े नाता कहां जा रहे हैं ?

न जाने नयन क्यों ? बहे जा रहे हैं।

है आकुल अधर कांपते मौन स्वर,
वे विवश जा रहे हैं अपचिति नगर,
देखता हूं पिघलते हुए हिमशिखर,
वे चले है विरह की चिता फूंक कर।

है मिलन, पर किसी की चिता जल रही,
धुआं मे छिपे वे कहां जा रहे हैं ?

न जाने नयन क्यों ? बहे जा रहे हैं।

उम्मीदों की दुनिया जली राख हो,
प्यार का वह महल भी गया खाक हो।
स्वर्ग की वह परी बादलो में छिपी,
देखते रह गये हम विवश मूक हो ।

एकतारा बजा, फिर हुए मन्द स्वर,
लाल आंखो से वे क्या कहे जा रहे हैं ?

न जाने नयन क्यो ? बहे जा रहे है।

—

और चाय की चस्क

⊕ विनोद कुमार सिन्हा

[जि]न्दगी—

चाय की-

वस एक चुस्की है

चीनी है सुख ।

दूध है दुख

जिन्दगी—

की चाय में

सुख और दुख का

होता है समिश्रण

मिलती है समता ।

दूध—

और चीनी में

किसी का अभाव होगा

चाय होगी कड़वी

घूँट नहीं उतरेगी ।

सुख—

और दुख में

किसी का अभाव होगा

तीखी होगी जिन्दगी

चुस्की न ली जायेगी

चाय—

अभी बनी होगी—

गर्म वाष्पमय होगी,

सारी दुनिया ओष्ठ से लगायेगी ।

ठंढी चाय तो ठुकरायी जायेगी ।

—

सच कहना

⊕ विमलेन्दुकुमार 'शलभ'

सावन की सन सन पुरवइया,
सुरमई बदरिया गदराई-
सच कहना क्या ऐसे में मेरी याद नही ग्राई थी ?
क्या बजारे बादल को लख
बन्धन कायल न हुग्रा होगा ?
क्या बूँदों की रुनझुन पायल से-
मन घायल न हुआ होगा ?
क्या उजले सपनों की घातें,
पलकें दुलरा न गई होगी ?
क्या पागल कलियो की सांसें-
तुमको सिहरा न गई होगी ?
सच कहना क्या बिन मेरे सूनी रात तुम्हे भाई थी ?
सच कहना क्या ऐसे मे मेरी याद नही ग्राई थी ?
पलको को काजल की रेखा-
अनजानी जान पडी होगी
लसियाए लट मे बिखर गई-
मोती की सुघर लड़ी होगी ।
मेहदी के मदिरा की बरछी-
ग्रँखियो मे ग्रान गढी होगी
ऐसे में बैरिन सांस लगी-
सौ बरसी एक घड़ी होगी
सच कहना क्या बिन मेरे नही ग्रगराई बौराई थी ?
सच कहना क्या ऐसे मे मेरी याद नही आई थी ?

—

जिन्दगी को इस कदर मत दो सहारे

विश्वदेव शर्मा

जिन्दगी को इस कदर मत दो सहारे,
जो कि मेरा स्वत्व मुझ से आप हारे।
और आखिर में बिना बैसाखियों के
जिन्दगी की राह चलना भूल जाऊँ,
किन्तु आँचल-ओट इतना मत करो तुम,
जो कि सारी रात जलना भूल जाऊँ।
प्यार वह जो पंख खोले फड़फड़ा दे,
वह नहीं जो पांव को बेड़ी पिन्हाये।
दर्द वह जो जिन्दगी को ताजगी दे—
और जीने की तमन्ना को जिलाये।
तुम भरो उजियार से सारे अंधेरे,
तोड़ दो घेरे मुझे जो आन घेरे।
किन्तु इतना मत करो आसान जीना,
जो कि कांटों बीच पलना भूल जाऊँ,
जो कि सारी रात जलना भूल जाऊँ।
चल रहे सब स्वप्न की अर्थी उठाये,
हर हँसी मन में कहीं पर रो रही है,
हर खुशी कुछ फाँस लेकर जी रही है—
अन-बिंधा मन इस धरा पर तो नहीं है।
घाव पर मेरे भले मरहम लगाओ,
प्यार से नजदीक भी मुझको बुलाओ,
किन्तु अपना आसरा इतना नहीं दो,
जो कि गिर कर फिर संभलना भूल जाऊँ,
जो कि कांटों बीच पलना भूल जाऊँ,
जो कि सारी रात जलना भूल जाऊँ।

—

मत जलाओ दीप

● विश्वमोहन गुप्त 'भारती'

मत जलाओ दीप, मत खुशियाँ मनाओ
जब तक धरा पर प्यार का सागर नहीं।
'प्रेम' तुम कहते जिसे
वह मात्र है छलना बड़ी।
'नेह' कह हँसते जिसे
वह जल्पना की है कड़ी।
मत बनाओ मीत, मत बगिया लगाओ
जब तक धरा पर प्यार का सागर नहीं।
तुम जिसे समझे हो 'ममता'
वह नही ममता तुम्हारी।
ममता यहाँ बस आज तृष्णा
तृषित नर की प्यास भारी।
मत बनाओ गीत, मत कलियाँ खिलाओ
जब तक धरा पर प्यार का सागर नहीं।
'प्रीति' जग से उठ चुकी है
मत करो विश्वास इस पर।
आज है बस वह दिखावा
मत करो एहसास जग पर।
मत सुनाओ नीति, मत बतियाँ बनाओ
जब तक धरा पर प्यार का सागर नहीं।

—

मन थका

⊕ विश्वदेव त्रिगुणायत

मन थका तन भी थका है आस फिर भी थक न पाती
वेदना झकझोर देती पर प्रतीक्षा चुक न पाती
हर आहट पर लगे नेत्र बाट तुम्हारी जोह रहे हैं
प्रति-पल नये विश्वास लेकर प्राण मेरे पल रहे है।
मन-सुमन का देवता के आगमन में विश्वास है
इसीलिये क्या दल उसके आज तक मुरझा सके हैं
दूर है यदि वह विनाश तो क्या हुआ कठिन नहीं है
बाहुओं में बल न हो आस्था क्या आधार भ्रम है
खे चलेंगे जीवन-तरणी को इस तरह उस ओर
हमको अब मंजिल तक पहुँचने को भी चाह नहीं है
साधना ही साध्य है वेदना ही परिणाम है
देवता की कृपा-कोर हो न हो भले ही
हमको अपनी निष्ठा पर बहुत विश्वास है।

—

जीवन की दुनियाँ

⊕ 'वीणा', जी० बी० मिश्र

तुम जो मुझको मिल जातीं।
मेरे इस जीवन का दुनियाँ, रिमझिम रिमझिम जल बरसाती,
ज्यों सरसिज भंवरा मधुपाता, तुम सरसिज भँवरे को पातीं।
भंवरा वन में प्रेम निभाता, तुम मुझको रस पान करातीं,
प्रेम का लोभी भंवरा मैं हूँ, तुम मुझ को अरविन्दु सुहातो।
पॉणिग्रहण तुम से यदि होता, प्रेम ललित सरिता वह जाती।
खिलता कमल सरोज में जो, त्यों प्रिय तुम मुझ में खिल जातीं।
तुम जो मुझको मिल जातीं।

—

यूँ मत तोड़ो

⊜ श्यामलाकान्त वर्मा

मैं बन्धन में निज प्राण बाँधता रहता
तुम प्राणों से बन्धन को यूँ मत तोड़ो।

रेशम की डोरी मे भावों को वाँधे
मैं प्यार भरी लोरियाँ सुनाया करता।
मन के पलने पर प्राण तुम्हारी प्रतिमा
प्रति धड़कन मे मैं उसे झुलाया करता।

मैं गाता हूं जो कुछ, मुझको गाने दो,
मेरे गीतों की ध्वनि को यूँ मत मोड़ो।

कम्पन मे कम्पित प्राण सिहर उठते हैं
सागर की लहरो सी स्मित की रेखा।
मेरे नयनो मे नयन तुम्हारे उतरे
चन्दा के मुख पर चुम्बन की प्रिय लेखा।

मैं भावों का मधु-लोक बसाता हूँ प्रिय,
मेरे मन के हैं तार इन्हें मत तोड़ो।

मजुल सपनों के पंख सीपियों-से ले
अम्बर विहरण की एक कामना मेरी
मृत्यु भाव लिए आया हूँ द्वार तुम्हारे
पूजन में अविचल बनी साधना मेरी

मैं पुष्पों का श्रृंगार सजाने आया,
तुम इन पुष्पों की मधुर मालिका जोड़ो।

—

अभियान-गीत

श्यामसुन्दर 'बादल'

वहादुरो बढ़े चलो शीश ये झुकें नहीं,
पैर ये रुकें नहीं।

केतु तीन रंग का हाथ में लिए बढ़ो,
तुम हिमाद्रि के महान् शृंग पर गाड़ दो।
देश के किरीट को रोंदते कमीन हैं,
तुम इन्हें पुकारते, शंख को धुकारते,
बढ़े चलो पुकारते, बढ़े चलो हुंकारते,
चीर-चीर आँधिया लाँघ-लाँघ खाइयाँ,
जा अहेर ढेर का शेर से दहाड़ दो।
शीश ये झुके नहीं, पैर ये रुकें नहीं।
राष्ट्र दला जा रहा, आज हिला जा रहा,
जान लिए तुम बढ़ो शान लिए तुम बढ़ो,
नश्तर लो हाथ में, सर्जरी करो बढ़ो,
शत्रु गर्व का पका-स्फोट चीर-फाड़ दो।
शीश ये झुकें नहीं, पैर ये रुकें नहीं।
रक्त की नदी बहा, मातृभूमि दुग्ध का,
ऋण चुका अनन्त तुम, तोड़ सर्प-दंत तुम,
गीत वन्दे मातरम गा गुंजा दिगन्त तुम,
जोश में भरे हुए, रोष में भरे हुए,
होश छीन शत्रु का, व्यूह तोड़-ताड़ दो,
शीश ये झुकें नहीं, पैर ये रुकें नहीं।
कर दधीच त्याग से, हिन्द वीर साहसी,
बन अजेय पार्थ तू, वीर शिवा साहसी,
तुम प्रताप से व्रती छत्रशाल से कृती,
कौम की बहादुरी ले लद्दाख पर चढ़ो,
शत्रु से जमे हुए ये मोर्चे उखाड़ दो,
शीश ये झुके नहीं पैर ये रुकें नहीं।

परिणीता से

❀ श्यामलाल 'शुभङ्कर'

उकुँडू बैठी रहती हो गुमसुम जुल्फ पसार कर
शायद रोती हो तुम हर पल मेरा नाम पुकार कर।

अधखुली पलक मे कैद किये सपनों का बीतापन,
उड़ती हो परबत-परबत ले मन का रीतापन,
खोज रही जो वशी का स्वर क्षितिजों के उस पार से,
अन्हियारी के बीच शूल सा अब तो जीता तन।

हर आहट पर दौड लगाती पिछवाड़े के द्वार पर
शायद रोती हो तुम हर पल मेरा नाम पुकार कर !

बहकी-बहकी ख्याल समेटे इस दर्दीले घेरे मे
सहमी-सहमी दृष्टि फेंकती बैठी ढीठ अंधेरे में
तुलसी चोरे पर माथा टेके अजुरी में मुराद लिये—
तृप्ति का स्वर सदा जगाती विरहिन रोज सवेरे मे।

मंगल कलश सजाती हो दर्शन के त्योहार पर
शायद रोती हो तुम हर पल मेरा नाम पुकार कर।

अभिशापित यह उमर सलोनी मन का दर्पण तोड दे,
विधि के निर्मम हाथों में जीवन नैया छोड दे,
घुटे-घुटे जीवन कुण्ठ को लांघ समर्पित हो बाँहों में—
व्यर्थ पुरानी राह छोड सब, प्रिय संग जीवन मोड़ दे।

अपशगुन हमारा दरस-परस अब सिन्दुर के इस धार पर
शायद रोती हो तुम हर पल मेरा नाम पुकार कर !

—

स्नेह के सिन्धु में

शंकर "क्रन्दन"

स्नेह के सिन्धु में कामना की तरी,
तिर रही ले मधुर कल्पना की परी !
रूप की रश्मियाँ
बेसुधी बन रहीं,
प्रेम की उर्मियाँ बन
बन सजल घन रहीं;
उर-जलधि में
उठा नव तरंग में विकल,
माँगता है भिखारी प्रणय-मधुकरी !
साध के स्वर सफल
हों यही चाहता,
प्राण स्वर मत विकल
हों यही चाहता;
नैशतम-सिन्धु में
ज्योति-जलयान जो
मैं उसे माँगता प्राण की सहचरी !
स्वप्न यह या कि है
स्वप्न की वंचना,
रूप यह या कि है
रूप की कल्पना;
साधना कर रहा
याचना अब नहीं,
प्रेम कन झर रही है विकल निर्झरी !
स्नेह के सिन्धु में कामना की तरी,
तिर रही ले मधुर कल्पना की परी !

अभी बाकी है

⊕ शम्भुनाथ 'श्रीवसन्त'

राग विहागी बीत गया है, पावस-गान अभी बाकी है।
आस नहीं कब सावन आये, विरही मन संग हाड़ लगाये
दुःख के हाथों बिके हुये दृग, अब तक सब छलकते आये
दिवस गये वो, रात गई वो, हम में खोये स्मित के क्षण
बस, आँखों का पानी साजन ! एक सहारा जो जीवन-धन
बीत चुके हैं यौवन तक क्षण, पर महमान अभी बाकी है।
चार दिनों की एक कहानी, जिसमें सबसे ज्वलित कहानी
मोह-माया, की हाला पीकर अंधी होती गई जवानी
छली गई तो जगी चेतना, विकल वेदना हाथ लगी
आज सुखी हूं लुटकर प्रीतम, नैनों की बेमोल झड़ी
प्याले आसव के पीये हैं, पर विष-पान अभी बाकी है।
वीणा झंकृत हो उकताई, स्वर लय करते हैं रुसवाई
अमा-गहन के अंधियारे में, मौत बनी आती तनहाई
तनहाई के इस प्याले में सकल जहान डुबो देता है
आज विधाते कुछ मत बोलो, आँसू से पद धो लेना है
विरह वेदना पर सुख वारा, जीवन-दान अभी बाकी है।

जिन्दगी आज के परिवेश में

⊕ शलभ

कहीं पर सूर्य को बिठाये डूबता असहाय क्षितिज।
अहिल्या चट्टानों पर
पागल अजगर सा फन पटकता अथाह समुद्र।
तट पर खड़ी मायूस सुबह
डैनों मे आकाश बाँधकर भागती
चील को निहार रही है……!

मधुचर्या

● शान्तन

चाँद पूनम का हो
या दूज का विमोहन होता है
चकोर आहत होता है।
जैसे सौन्दर्य जिसके पाटल पखुरी-से अधरों पर
रस गंधी स्मिति हो
या रोष का कंपन
सम्मोहन होता है।
रोम-रोम में—रस-प्लावन होता है।

नादान के प्रति

● शान्तिस्वरूप शर्मा 'अलिमस्त'

पला था कभी प्यार पलकोंमें जिनका,
वही आज आँखें दिखाने चले।
एक दिन अपने घरमें बसाया जिन्हें,
वही मेरे घरको जलाने चले।
बहुतही जरूरत अगर आपको थी
तो पहले ही हमसे कहा क्यों नहीं।
हम वहीं कब्र देते बना आपकी
आप तकलीफ नाहक उठाने चले।
इरादे तुम्हारेये नापाक दिलके,
ऐ 'पाक' पूरे न होंगे कभी।
छोड़दो देखना ख्वाब कश्मीर का,
नाहकही सर क्यों कटाने चले।
इसी देशके खाके टुकड़े पले,
उसीको मिटाना अगर चाहते—
नौजवाँ हिन्दके लो तुम्हारे सभी
लहने प्यास अपनी बुझाने चले।

मृत्यु जीवन के लिये

शिवउपाध्याय 'शिव'

देश की आवाज है साथी बढ़ो
दुश्मनों के दुर्ग पर मिलकर चढ़ो।
मत रुका, देखा नया अभियान है
मृत्यु; जीवन के लिये वरदान है
कर्तव्य को जो प्राणपण से कर गया
वह अमर है देश हित जो मर गया
युग-युगों से यह अरे आह्वान है
सत्य; मिथ्या से बताओ कब-डरा ?
नीति को किस दिन अनीति ने वरा
अहिंसा का तो सदा सम्मान है
साहसी ही विश्व में चमका सदा
स्वावलम्बी ही अरे पनपा सदा
वीरवर गाता सदा जयगान है
मृत्यु जीवन के लिये वरदान है

स्वर्ग

शिवकुमार शाण्डिल्य 'तारियो'

प्रासाद भित्ती पार, पूर्ण गम्भीर, कुटीर-प्राचीन।
प्रासाद गोलाकार चतुर्दिक अंधकार,
बद सम्पूर्ण द्वार खोजजे मार्ग-हाथ पसार।
बनाते साधन—अतोप, काम, कुचल, रत्न, धन।
कुटीर प्राचीन, गाती—"वसुधैक कुटुम्जकम्"
केवल भूखों को जोजन।
गुंजाती धरा गगन करती तरंगित आर्य-मन।
'विश्व बन्धुत्व' के चरण दे सकती है सुप्रिमा,-भिक्षुक-कन्या
करती कुटीर शास्वत कथन—
"...फिरदोस बररुए...जमीं अस्त।"

इस विशद नीम के वृक्ष तले

⊕ शिवदत्त शर्मा

इसकी शाखाएँ हिलती हैं,
या पुलक परस्पर मिलती हैं,
यह पत्र पुंज गुम्फित होकर,
उस द्वैत भाव से दूर चले।
सह ज्वलित जेठ की दोपहरी,
निस्पद हुई थी स्वर लहरी,
अपने सिर गुरुतर भार, लिए,
वे थक आए थे दिवस ढले।
दिन भर उनने वालें कतरी,
सब दे दीं जो थी भरी भरी,
ले बोझ चरी का अपने सिर,
डगमग-डगमग इस मग निकले।
उनके श्रम या बोझे उतरे,
इसके चरणों पर गए धरे,
वे भूल-भूल कर कष्ट कथा,
दो पल सुख कलकी गोद पले।
जग कहता कितना कड़ुआपन,
मग का है पर यह जीवन धन,
इसकी छाया मे विरमे सब,
इसके क्या वे हैं बुरे भले
जो हैं कब तब अब मग आँखें
क्या करें ? न प्राणों के पाँखें,
यह अंधकार, यह घन छाया,
दो क्षण को आओ मिलें गले

--

जूड़े का सफेद फूल

◎ शिवपूजन लाल 'विद्यार्थी'

ये जानकर
कि पूरब की झाड़ी से
क्रोध में पागल
लाल-लाल आँख किये
विहंगों के स्वर में
हो-हल्ला करते
सूरज-रखवाले के
आने का वक्त करीब है,

निशा,
गगन के खेत में
चरते हुए मस्त-मगन
तारों के ढोर को
तिमिर के डंडे से
जल्दी-जल्दी हाँकती
चोर-सी भाग चली।

पर, क्या मालूम उसे
कि हड़बड़ में जूड़े का सफेद फूल
नहीं गिर गया
मरीज-सा
मौन-म्लान!

—

ज्योतिधार बरसो

⊜ शिवदयाल शर्मा 'अम्बु'

बरसो मां, ज्योतिधार बरसो, सुधा धार बरसो
नया वर्ष है, नई कल्पना, नये भाव बरसो
भावों के आलोक कमल पर, वास तुम्हारा, हो
अग जग के हर मधुर कंठ में, गान तुम्हारा हो,
नयी प्रणाली, नई व्यवस्था, नये प्यार बरसो
बरसो मां, ज्योतिधार बरसो, सुधाधार बरसो
भेद भाव सब मिटा धरा से, नई जाति जागे
मानव के भय, तम, लिप्सा, की सभी बात भागे
ओज भरे, पीयूष भरे, तुम नये राग बरसो
बरसो मां, ज्योति-धार बरसो, सुधा-धार बरसो
हर सीपी में स्वाति बूंद बन, जीवन बस जाये
सत्य, अहिंसा, धर्म-कर्म की मुक्ता उपजाये
मंगलमयी देवि, तुम जग को, मगल मय कर दो
बरसो मां, ज्योतिधार बरसो, सुधाधार बरसो
निश्चल ध्रुव बन, आज धरा मे, नई शक्ति जायें
श्री, आलोक, राग, रस के, नव मधुर गीत गायें
सामवेद समता का गूंजे, जग ऐसा कर दो,
बरसो मां ज्योतिधार बरसो, सुधाधार बरसो

जग फीका फीका सा लगता

⊜ शीला पाठक

मेरी पलकों में मधुर पीर प्राणों में उठता मधुर ज्वार,
किस भांति बता रोक इनको खोया-खोया सा विकल प्यार।
जग फीका-फीका सा लगता भाती न उर को सान्ध्य-भोर,
यह निठुर जगत क्या पहिचाने मैं किस की सुधि में हूँ विभोर,
क्यों पाट रहे शूलों से पथ, जगती जीवन के जड बन्धन,
अनजाने हैं वे चारे वे, क्या रोक सकेंगे मेरा रथ।

स्मृति-दीप

© शुकदेव प्रसाद वर्मा

अमर रहे यश सदा तुम्हारा,
लाल बहादुर जग में न्यारा।
चमके दिव्य मनुज तन पाकर, चक्रायुध अवतार।
तुम में छटा अनोखी निखरी,
स्वर्णिम आभा-रश्मि बिखरी।
शान्ति-अहिंसा पाठ पढ़ाकर, दिया विश्व को अद्भुतनारा।
त्याग-तपस्या अनुपम तेरी,
बनी पारदर्शिका हमारी।
मूर्तिमान देदीप्य केहरी, दीन हृदय था वतन तुम्हारा।
कृश तन मोहक रूप तुम्हारा,
बृहत, शील गुण अपरम्परा।
ज्योति-जवाहर-कलश तुम्हीं थे, बन प्रति रूप लाल तन धारा।
बापू पथ के पथिक बने तुम,
संत विनोबा संग चले तुम।
राम राज्य कल्पना हृदय में, कलम धोया पुण्य सारा।
पाक-हिन्द संघर्ष काल में।
फँसा विश्व दुर्द्धर्ष जाल में।
शंकर सम निज नयन खोल, तुम हने टैंक पैंटन क्षारा।
पंचशील का अपीच्य प्यारा,
प्रतिमा थी तन उज्जल तेरा।
किया अपसरण ताशकन्द में, बना शून्य महि मण्डल सारा।
रहीं शेष तव अमर कहानी,
मानवता की विश्रुत वाणी।
गांधी युग के परम तेजस्वी, हुए लुप्त गगन सितारा।
अमर रहे यश सदा तुम्हारा।

—

कौन तुम

◎ शेषआनन्द 'मधुकर'

कौन तुम मेरे हृदय के इस अनन्ताकाश मे ?

वेदना की आंच जलती रही सुधियाँ तुम्हारी,
कल्पना की बांह में थी प्रीत की निधियाँ तुम्हारी,
लुट गई सारी प्रबल आकांक्षा की मधुर घडियाँ
एक ही विश्वास मेरा, मैं न जीता, तुम न हारी

कौन सा कम्पन बिखरता आज हर विश्वास मे ?
कौन तुम खग से विहंसते हृदय के आकाश मे ?

यह जगत, जिसमें किसी का एक पल अपना नही है
कौन सा पथ है, कि जिस पर पथिक को तपना नहीं है
दूर भी हो, पास भी हो, साँस भी हो, आस भी हो
फिर भी कैसे मान लूं, यह सत्य है, सपना नही है

खो रहा जीवन हमारा दर्द के वातास में,
कौन तुन सुधियों समेटे सिसकते, उल्लास मे।

तिमिर आवत्त के वह पूर्णिमा तो दूर ही है
तिक्त जीवन से तुम्हारी मधुरिमा तो दूर ही है
नयन मे पावस लिए जग की अमावस देखता हूँ
पर तुम्हारे नयन की वह नीलिमा तो दूर ही है

प्राण पिघले हैं कि जैसे गीत हो उच्छवास में,
कौन तुम मेरे हृदय के इस अनन्ताकाश में।

—

बचपन की कली

श्रीजगदीशशरण बिलगयां
'मधुप'

बचपन की कली गोद माँ की पली;
आज क्यों ये ? चली है पिया की गली।
सज गई पालकी चल पड़ी पालकी,
नैन गंगा की लहरें लहर ले उठीं।
रो ऊठे चाँद जो थे धरा के वहाँ,
गर्म ज्वाला मुखी स्रोत झरने लगे।
युग युगों से सदा चाँद शीतल रहा,
आज क्या ये ? हुआ लोग डरने लगे।
कामना के हृदय के कमल हैं दुःखी,
मानो ही मूक वे आह भरने लगे।
या कि लीला विधाता की लख कर भली,
मौन हो शान्ति से गान करने लगे।
खो के धीरज स्वय, धैर्य देती उसे,
बस यही है कहानी इस जाति की।
जिन्दगी तब बसाओ मेरी लाड़ली,
औ गुजारा करो तुम किसी भाँति भी।
छूटी सखियाँ सभी औ पिता का भवन,
बन गई है पराई दिया तन औ मन।
इक नया पथ मिला औ मिले प्राण धन,
छोड़ इत से लगन उत लगी है लगन।
जिन्दगी ने लिया इक नया मोड़ है,
मिल गया ये अनोखा 'मधुप' जोड़ है।
बन गृहस्थी के पहिये चलेंगे युगल,
बन सकेगा तभी इनका जीवन सफल।

—

हुंकार

⊕ श्री निवास प्रसाद

रण को भेरी बज रही आज
सीमा की घाटी रही पुकार
उठो वीर समर को जाओ
दूध की रख लो तुम लाज !
कल्पना के भाव से तुम
देश मे हुंकार भर दो।
प्रणय की मृदु भावना को
आज विप्लव में बदल दो !
शृंगार के इस ससार से
कवि आज तुम उबरो,
खून को स्याही बनाकर
लेखनी तलवार कर दो !

—

सेमल का फलः कवि का मन

⊕ श्रीशरण

लेकिन मैं सेमल का फल हूँ, रग सका जिसे ऋतुराज नहीं;
अरे, मेरा मन उजला जब तलक, होगा सुखी समाज नहीं;
हर ओर भूख, आँसू-पीड़ा, उल्लास पूर्ण कुछ साज नहीं,
परिवेश ना है मरघट का, मधुवन का कुछ अन्दाज नहीं;
तब कोई कह दे किरणो से, रंजन के बदले दे न जलन।
ये बाँस, नारियल-कदली के, ओठो से छनकर लाल किरण,
हर भोर हृदय छूती मेरा, रँगने आती उजला सा मन।

—

अब दुश्मन का नाम मिटा दो !

सन्तशरण शर्मा 'संस'

अमरों की सन्तान अमर तुम, दुश्मन का अरमान मिटा दो,
असत् दम्भ अभिमान मिटा दो, झूठी इसकी शान मिटा दो।

रणचण्डी के वीर उपासक,
छोड़ आज निद्रा तुम जागो,
रण चण्डी का खप्पर भर दो,
और शत्रु पर गोली दागो,
निश्चय मरना है उस जन को,
जिसने जन्म जहाँ में पाया,
जन्म अवश्यम्भावी उसका,
जिसकी आज जा रही काया,

फिर क्या बैठे सोच रहे हो, खल का मिथ्या मान मिटा दो।

दाताओं से दान माँगती,
माँ अर्पित दान करो;
घर वैभव संग रक्त दान दो,
और प्राण का दान करो।
तन मन जीवन जिससे पाया,
अब उस माँ का ध्यान करो,
माँ पर संकट आज पड़ा है,
देश भक्त ! बलिदान करो,

हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, इसाई दुश्मन का नाम मिटा दो।

—

जब याद तुम्हारी आती

सुश्री सत्यवती भैया

जब-जब याद तुम्हारी आती, नयनों की गागर भर लाती।
मन मन्दिर के मग्न हिंडोरे,
लेते हैं जब भाव झकोरे।
मेरा मनस्ताप दोहरा कर,
मन को है बोझल कर जाती।
जब-जब याद तुम्हारी आती, नयनों की गागर छलकाती।
पीड़ा से बोझिल यह पलकें,
जीवन की उलझी यह अलकें।
गिनते-गिनते जीवन घड़ियाँ,
सूनी-सूनी दुनिया सारी,
सूना जीवन है कर जाती।
जब-जब याद तुम्हारी आती, नयनों का सावन बन जाती
कितने रात-दिवस बीते हैं,
मरे हुये फिर भी जीते हैं।
सूनी-सूनी दुनिया सारी,
सूना जीवन है कर जाती।
जब-जब याद तुम्हारी आती, नयनों में आँसू झलकाती
यदि भूलूँ तुमको मैं निर्मम,
तब मेरा क्या शेष रहेगा।
याद तुम्हारी हो तो आकर,
पीड़ा कुछ हलकी कर जाती।
जब-जब याद तुम्हारी आती, नयनों के मोती ढलकाती

—

मुझे ऐसा लगा

सन्तराम त्रिपाठी 'अरविन्द'

सी की चूड़ियां बजती सुनी ज्योंही सुमुखि मैंने-
हंसाने आगईं तुमहीं मुझे ऐसा लगा।
झुके बादल वही पुरवा।
फुहारें गिर चलीं छुन छुन।
वनों में मोर कुहुंकाने
झिंगुरे कर उठे झुन-झुन।
किसी की मांग को देखा हमारा प्यार सूना सा-
मांगने आगईं तुमहीं मुझे ऐसा लगा।
हंसी कलियाँ चले भौंरे—
सुहाने राग को गाने।
पपीहा टेरकर पी पी
लगा था और तड़पाने!
किसी की देख कर बिन्दी, अंधेरा राह का मेरी-
मिटाने आगईं तुमही मुझे ऐसा लगा।
फुही से भीगती चूनर
अलक थे खेलते मुख पर
गड़ी थी मद भरी आँखे
किसी के अनमने पथ पर
किसी के नैन ज्यों देखे, हमारा पंथ भूला सा-
बताने आगईं तुमही मुझे ऐसा लगा।

—

तीन

विपदा की देन

⊕ 'सरस', दयाशंकर मिश्रा

विपदा यदि तुम गले न लगती तो जग को मैं समझ न पाता,
कल तक के सारे मीतों को सच्चा साथी कहता रहता।
जिन तारों को मैंने हर निशि भर भर प्यारी सुरा पिलाई,
जिनने मेरी मन वीणा पर कल तक राग बसंती गाई।
कल तक जिनने प्रिय आंचल में चमक दमक कर होली खेली,
उन नटखट तरुणी रातों में मेरी आंख मिचौनी देखी।
आज घटायें न आती तो इन तारों को समझ न पाता।
जिस कानन की कली कली ने नित्य नया शृंगार बसाकर,
अलकों से आलिंगन सीखा, रूप गंध यौवन विकसा कर।
मुस्काना जिनने सीखा था ओंठ कमल को मेरे छूकर,
जिनने खुद को किया समर्पित कल तक मुझको देव समझकर।
अपनी तुम कानन में न आते तो खुद की कीमत समझ न पाता।
समझ रखा था जिनको औषधि पीड़ा का उपचार बनाकर,
जिनका साथ भुला देगा हर मेरा दर्द शूल के बढ़कर।
मेरी हर पीड़ा पी लेंगे सोचा था जो आगे आकर,
मेरे लिये एक तो क्या वो विश्व भुला सकते हैं हसकर।
पर "एक" यदि तुम न आते तो उनको अब तक समझ न पाता।
सोचा था मेरी पीड़ा पर वह निकलेगी गंगा जमुना,
मेरी चिता सजा देंगे वो फैलाकर साड़ी का कोना।
पर अज्ञात जगह हर तेरी इन सूने लहमों में जाना,
मेरी नग्न चिता जब सूनी करती है आवाहन तेरा।
जीवन यदि तुम न छलते तो जीवन को मैं समझ न पाता,
कल तक के सारे मीतों को सच्चा साथी कहता रहता।

—

मौन सदा ही बोझिल...।

⊕ सावित्री शुक्ल

जीवन भर का प्यार सँजोया, मैंने ढलती रात में,
अन्तर की भाषा पढ़ लेना, मेरी पहली बात में।

दर्द बड़ा है, बहुत बड़ा है,
नयनों तक भी रह न सका है,
मेरा मौन सदा ही बोझिल—
अधरों से कुछ कह न सका है।

जीवन भर का ज्वार सँजोया, रे, आँसू के पास में।
अन्तर की भाषा पढ़ लेना, मेरी पहली बात में।

तुमने नयी-नयी भाषा में
नया-नया-सा गीत दिया है,
प्राणों में रे प्यासा-सागर—
तुमने मुझको मीत दिया है।

जीवन भर का भार सँजोया, आँसू की बरसात में।
अन्तर की भाषा पढ़ लेना, मेरी पहली बात में।

मीत, तुम्हारे प्रीति-करों से—
प्राणों का घट छलक गया है,
सूने-नभ पर, चाँद दूज का—
जैसे बरबस झलक गया है।

मन का हाहाकार सँजोया, मैंने जलती रात में।
अन्तर की भाषा पढ़ लेना, मेरी पहली बात में।

—

जिन्दगी

© सांवलिया 'विकल'

श्वास की हर सांस पर चल रही है जिन्दगी
कि स्वप्न के सितार पर मचल रही है जिन्दगी

बढ़ रहे हैं हर कदम, प्यार के दुकूल पर
कि घोर झंझावात में पल रही है जिन्दगी।
है घोर अन्धकार पथ, भटक रही है जिन्दगी
कि भटक-भटक स्वयं राह सम्भल रही है जिन्दगी

निशा के तम वितान, पर हो रहा विहान है
कि उषा के समीर सम, महक रही है जिन्दगी।
दर्द के हर दांव पर हँस रही है जिन्दगी
कि मौत के कगार पर टहल रही है जिन्दगी

चुभ रहे हैं शूल, बन फूल हर पहर-पहर
कि वेदना के संग-संग बहल रही है जिन्दगी।
काल की हर चाल पर सिहर रही है जिन्दगी
कि मर-मर धरा पर जी रही है जिन्दगी

उम्मीद बँध रही है, प्राण के तार-तार से
कि हर्ष-व्यथा प्यार को सजा रही है जिन्दगी।

—

हम गीत देश के गाएं

● सुदीप

हम शत बार प्रणाम करें उस पुण्य धरा को,
जिसने हमको जन्म दिया है, बड़ा किया है,
जिसके जल का रक्त बना है फिरता तन में,
जिसकी मस्त हवाओं ने वह प्राण दिया है,
जिसकी गोदी के फूलों को हमने कुचला,
बचपन के नन्हे-नन्हे पांवों, हाथों से
हमें कसम है छांव-भरे मां के आंचल की,
लाज बचाएंगे इसकी अपने माथों से।
आओ, मिल हम दुश्मन मार भगाएं,
माता के हम सच्चे पूत कहाएं,
यह भारत है, भरत यहां का स्वामी ऐसा,
जिसने क्रुद्ध सिंहनी के छीने थे शावक,
यह प्रताप का देश, शिवाजी की धरती यह,
हम हैं हिम का रूप, समय पड़ने पर पावक,
क्यों न चलें हम, युद्ध भूमि से मिट्टी लाएं,
जिसमें भारत के वीरों का रक्त घुला है,
उस मिट्टी के दीप बनाएं और जलाएं,
हम भी ऐसा कहें - हमारा खून जला है।
आओ, मिल हम घर-घर दीप जलाएं,
बलिदानी की अमर, ज्योति चमकाएं

—

मृत्यु प्यासी है

— सुरेश प्रसाद सिन्हा

सर्व प्रथम, अधिकार शान्ति का
मिला मनुज को भू पर;
किन्तु, नही मिल सका स्रोत वह,
जहाँ शान्ति बसती है।
शान्ति शान्ति की रट मे मानव ?
सदियाँ बीत गई हैं,
किन्तु, कहाँ रह सकी शान्ति
आण्क्षण धरा पर अब तक ?
युद्ध बना कर्तव्य समय पर,
दृग शान्ति का टूटा
और पुजारी के कर से
संदेश मृत्यु का छूटा।
छाती क्रुद्ध फूल गई-कि—
घर पर मोम बने अंगारे
समय-समय पर कली स्वय ही
ज्वाला मुखी बनी है '
उठा-उठा बन्दूक ' तान ?
गोलियाँ शीघ्र ही बरसे ?
क्रुद्ध युद्ध का देव, समर मे
पुनः मृत्यु प्यासी है।

—

ग्रहण करता

सियारामशरणसिंह 'सरोज'

अर्घ्य मेरे ! गीति-पथ का गान-गुंजन ग्रहण कर लो,
मुक्ति-अनचाहा-कमल का कुंज किंचित भ्रमण कर लो।
अर्घ्य मेरे ! गीति-पथ का गान-गुंजन ग्रहण कर लो।
साधना सस्मित प्रभा का विच्छुरित आलोक-रजन,
एक तेरे ही लिए निर्मित सकल-सुख-शोक-अंजन
छंद अपलक-छवि तुम्हारी कर रहा जो आज चित्रित-
उस अमर-साकांक्ष कवि का नेक रखलो, नाज इच्छित;
शून्य नीलाकाश मेरा—ज्योति-शशि-संचरण कर दो,
नेह की नीराजना का साध स्वर तुम सजग कर दो।
मुक्ति-अनचाहा-कमल का कुंज किंचित भ्रमण कर लो,
अर्घ्य मेरे ! गीति-पथ का गान-गुंजन ग्रहण कर लो।
छेड़ता जो मधुरमय संगीत मेरा प्राण अविकल,
यह तुम्हारी अर्चना में गीत की कड़ियाँ समुज्ज्वल;
फूल जो नैवेद्य में मैंने चढ़ाए गीत गुरुवर,
प्रेरणा का स्रोत तेरा ही मिला मुझको अचंचल।
उस मधुर संगीत के स्वर-सार को तुम स्वयंवर दो,
साधना को शक्ति का दाम्पत्य-जीवन-पूर्ण-वर दो।
मुक्ति अनचाहा-कमल का खुंज किंचित भ्रमण कर लो,
अर्घ्य मेरे ! गीति-पथ का गान-गुंजन ग्रहण कर लो।
गीत के सागर, तुम्हारा गान मुखरित हो भुवन में,
मैं रहूं गुंजित तुम्हारे गीत के ही स्वर-सदन में;
एक स्वर मेरा—तुम्हारा स्वर हुआ संबल कहीं—
और क्या चाहे मधुर मम गान— रति, गंतव्य, वर ही।
गीत की गरिमा मुझे मिल जाय—मेरे गीत गुन दो,
बाँसुरी के छिद्र छोटे हैं बड़े—तुम सुघर सुर दो।
मुक्ति-अनचाहा-कमल का कुंज किंचित भ्रमण कर लो,
अर्घ्य मेरे ! गीति-पथ का गान-गुंजन ग्रहण कर लो।

इक हवा चली

⊖ सुकुमार

धीरे धीरे सरक सरक आँचल सरका, सरका।
धड़ पर ढलका।
पड़ा रहा दो क्षण बन उभरे उरोज का झीना परदा।
इक हवा चली, इक अंग हिला,
सरका आँचल, कटि पर लटका।
झीना सा था जो परदा, कुछ और हुआ अब गहरा।

—

युद्धरत विश्वास

⊖ सूर्यनारायण 'सिद्धार्थ'

भेदने हैं प्रभुसत्ता पर घिरे काले बादलों के
पाकिस्तानी जेट तोड़ने हैं मोड के पत्थर
कि जो बनकर ऊँचाई कठिन राहों की
हमारे रास्ते में आ पड़े हैं।
अभी डर है—सामने दुश्मन पड़ेंगे
रोक कर उनको लड़ेंगे
और शत्रु के कि खट्टे दाँत कर देंगे!
अभी भारी टैंक-तोपों को जलाने हैं।
देश पर खतरा खड़ा है
आ रहा है सामने तूफान
उससे जूझना है! हल समझना है—फिर
अपने प्रश्न के हैं ढूंढने उत्तर—!

—

ग्रहण करलो

● सियारामशरणसिंह 'सरोज'

अर्घ्य मेरे ! गीति-पथ का गान-गुंजन ग्रहण कर लो,
मुक्ति-अनचाहा-कमल का कुंज किंचित भ्रमण कर लो।
अर्घ्य मेरे ! गीति-पथ का गान-गुंजन ग्रहण कर लो।
साधना सस्मित प्रभा का विच्छुरित आलोक-रजन,
एक तेरे ही लिए निर्मित सकल-सुख-शोक-अंजन
छंद अपलक-छवि तुम्हारी कर रहा जो आज चित्रित-
उस अमर-साकांक्ष कवि का नेक रखलो, नाज़ इच्छित;
शून्य नीलाकाश मेरा—ज्योति-शशि-संचरण कर दो,
नेह की नीराजना का साध स्वर तुम सजग कर दो।
मुक्ति-अनचाहा-कमल का कुंज किंचित भ्रमण कर लो,
अर्घ्य मेरे ! गीति-पथ का गान-गुंजन ग्रहण कर लो।
छेड़ता जो मधुरमय संगीत मेरा प्राण अविकल,
यह तुम्हारी अर्चना में गीत की कड़ियाँ समुज्ज्वल;
फूल जो नैवेद्य में मैंने चढ़ाए गीत गुरुवर,
प्रेरणा का स्रोत तेरा ही मिला मुझको अचंचल।
उस मधुर संगीत के स्वर-सार को तुम स्वयंवर दो,
साधना को शक्ति का दाम्पत्य-जीवन-पूर्ण-वर दो।
मुक्ति अनचाहा-कमल का खुंज किंचित भ्रमण कर लो,
अर्घ्य मेरे ! गीति-पथ का गान-गुंजन ग्रहण कर लो।
गीत के सागर, तुम्हारा गान मुखरित हो भुवन में,
मैं रहूं गुंजित तुम्हारे गीत के ही स्वर-सदन में;
एक स्वर मेरा—तुम्हारा स्वर हुआ संबल कहीं—
और क्या चाहे मधुर मम गान— रति, गंतव्य, वर ही।
गीत की गरिमा मुझे मिल जाय—मेरे गीत गुन दो,
बाँसुरी के छिद्र छोटे हैं बड़े—तुम सुघर सुर दो।
मुक्ति-अनचाहा-कमल का कुंज किंचित भ्रमण कर लो,
अर्घ्य मेरे ! गीति-पथ का गान-गुंजन ग्रहण कर लो।

इक हवा चली

⊕ सुकुमार

धीरे धीरे सरक सरक आँचल सरका, सरका ।
घड़ पर ढलका ।
पड़ा रहा दो क्षण बन उभरे उरोज का झीना परदा ।
इक हवा चली, इक अंग हिला,
सरका आँचल, कटि पर लटका ।
झीना सा था जो परदा, कुछ और हुआ अब गहरा ।

—

युद्धरत विश्वास

⊕ सूर्यनारायण 'सिद्धार्थ'

भेदने हैं प्रभुसत्ता पर घिरे काले बादलों के
पाकिस्तानी जेट तोड़ने हैं मोड़ के पत्थर
कि जो बनकर ऊँचाई कठिन राहों की
हमारे रास्ते में आ पड़े हैं !
अभी डर है—सामने दुश्मन पड़ेंगे
रोक कर उनको लड़ेंगे
और शत्रु के कि खट्टे दांत कर देंगे !
अभी भारी टैंक-तोपों को जलाने हैं ।
देश पर खतरा खड़ा है
आ रहा है सामने तूफान
उससे जूझना है ! हल समझना है—फिर
अपने प्रश्न के हैं ढूंढ़ने उत्तर—!

—

संघर्षों के बादल

सुधा गुप्ता

पहाड़ों से उठता
बादलों का धुआँ
अनायास मेरे मन पर
छा गया है।
लगता, है,
बादलों की गड़गड़ाहट
आकाश में नहीं है
कहीं मेरे भीतर है
परस्पर टकराते
ये संघर्षो के बादल
अब बरसे···अब बरसे।

गीत, मृत्यु-पाश है :

सुरेश 'समीर'

ओ रे मनुष्य
तुम अबाध चल पड़ो
अंध द्वन्द जीतते
तुम रुको नहीं, झुको नहीं
पंथ-पंथ पर कहीं थको नहीं
चलो प्रेम-रस से भीगते
मझधार हो पहाड़ हो
सबको लाँघ कर बढ़े चलो, चले चलो
धुन में अपनी जूझते
गीत ही श्वास है
अगीत मृत्यु-पाश है
लगे न देर क्षण बीतते

स्वप्न धूमिल पड़ चले अब !

⊕ डा० सुरेन्द्र वर्मा

सत्य मैं समझा जिन्हें था,
प्यार से पाला जिन्हें था,
ख्वाब बन कर तारकों के साथ वे भी चल पड़े अब !
स्वप्न धूमिल पड़ चले अब !
रात भर जो जगमगाए
गीत बन कर गुनगुनाए
झिलमिला कर एक पल को दीप मेरे ढल चले अब !
स्वप्न धूमिल पड़ चले अब !
सज गई थी लय सुनहरी
राग बन कर, किंतु मेरी
बीन के दो तार के स्वर शून्य बनकर उड़ चले अब !
स्वप्न धूमिल पड़ चले अब !

—

प्रिये, क्यों मुस्कुराती हो ?

⊕ सुरेश प्रसाद 'विमल'

सलोने स्वप्न के अंदर प्रिये ! क्यों मुस्कुराती हो ?
सुहानी रात कितनी है छिपा है चाँद बदली में,
चमकती है कभी चपला दिखाती रूप कजली में।
सुहानी रात में आकर प्रिये ! तुम क्यों जगाती हो ?
सलोने स्वप्न के अन्दर प्रिये ! क्यों मुस्कुराती हो ?
युंदे मैं पलक-दल हूँ मजे की नींद आई है,
मिटी पिता की फुलवारी हृदय में शांति छाई है।
छिपाकर शून्य में आखिर री ! पायल क्यों बजाती हो ?

—

आशा

⊕ सोमदेव एम० ए०

प्रिय, प्रतीक्षा में तुम्हारी रातभर
मैं चाँद को ही देखती सी रह गयी।
दीवा जला आकाश गंगा तीर पर
रतजगा किन अप्सराओं ने किया,
नाव कोई पास तो आयी नहीं
बस दूर से ध्वनि वीण-तारों ने दिया
कस्तूरियों में डूवती दिग्भ्रांत मैं,
बाँसुरी सुन बावरी सी रह गयी।
खेत सेमल झाग से सपने हमारे
उड़ रहे आकाश अमृत हो रहा,
दूर हलकी वदलियों का सुनहला-सा
जाल मन का मीन दो क्षण खो रहा,
चांद की आरसी मितहासवाली
यामिनी शृंगार करती रह गयी।
मधुर झोंका बदन में कसमसाहट,
किसी के सेज के शृंगार कांटों से चुभेंगे
अलसायी पलक लेटी रही हूँ दस वजे तक,
लोग उठकर क्या कहेंगे
रात के आंसू गिरी शेफालिकाएँ
भोर तक चुनती ठगी सी रह गयी।

—

वह प्यार तुम्हारा

● दयानन्द तिवारी 'कुमारेश'

जनम-जनम तक याद करूँगा, पल भर का वह प्यार तुम्हारा।
भावों में तूफान और नयनों में लेकर पानी
जब तुमने झकझोरा मुझको, ओढ़ चुनरिया धानी,
याद तुम्हे होगा ही वह दिन, क्या उसको दुहराऊँ?
सपनों का संसार सुनहला, मैं कैसे बिसराऊँ?

उर में सदा सजोये रहता, वह अनुपम उपहार तुम्हारा,
जनम-जनम तक याद करूँगा, पल भर का वह प्यार तुम्हारा।
अपने अनब्याहे अरमानों को कैसे बहलाऊँ?
किसके द्वारा उर-तन्त्री को, झंकृत प्रिये! कराऊँ?
सिसकी भरी बहारें मेरी, सिसकी नई जवानी,
इन नयनो में तुम्हें बसाया, डालो धूल न रानी

ऋण से उऋण न हो सकता मैं, मानूँगा आभार तुम्हारा,
जनम-जनम तक याद करूँगा, पल भर का वह प्यार तुम्हारा।
झुलस रहा शतदल-सा अन्तर, मैं कैसे आराधूँ?
कैसे श्वासो की वंशी में, आशा के स्वर बांधूं?
धरती औ पाताल एक करदूँ कैसे मैं बोलो!
मेरे मुरझाये यौवन मे, नव जीवन-रस घोलो!

मेरी सदा यही अभिलाषा, हो मधुमय संसार तुम्हारा।
जनम-जनम तक याद करूँगा, पल भर का वह प्यार तुम्हारा।

—

मै गीत लिख रहा....

डा० हनुमान दास 'चकोर

मैं गीत लिख रहा हूँ, क्या कोई मोल सकेगा ?
नहीं, तो बोली बोलो, आने, दो आने, चार आने,
तुम ले न सकोगे, क्यों कि गीत कुछ भारी से हैं,
इन गीतों में नूपुर की झंकार नहीं है,
इन गीतों में प्रेयसि की पतवार नहीं है,
इन गीतों को साकी के प्यालों का भी
कोई मादक भाव नहीं अब तक मिल पाया,
इन गीतों मे अमर शहीदों की गाथा है !
जो बलिदान हुए अब तक उन सीमाओं पर
इसीलिए तुम ले न सकोगे
तुम मदिरा पर दीवाने हो
तुम नर्तकी पर दीवाने हो
पर, दोनों से बढ़कर मादकता इनमें है
जो सारे जग को ऐसी मस्ती देगी
जो एक ओर गांधी बाबा को
गौरव देकर सत्य-अहिंसा भाव रखेगी
तो सीमा के वीर प्रहरियों का आलिंगन कर
सारे भारत में प्रोत्साहन देकर
नव पथ का निर्माण करेगी
क्या इस पर भी मुँह खोल सकोगे
मैं गीत लिख रहा हूँ, क्या मोल सकोगे ?

—

चिर प्रतीक्षा है उस क्षण की

● हरिकृष्ण 'पंकज'

सिर्फ वेदना का पड़ाव अब,
अवसादों की और छांव बस !

आज हृदय की वीणा के सब के सब स्वर अतिक्रांत हो गए।

चली पवन था झूमा उपवन,
झरा सुमन उठ आया क्रन्दन।
कैसी यह बन गई जिन्दगी—
नश्वरता अन्तिम बन्धन।

आन दबोचा पतझरों ने, खिले फूल कब इन खारों में,
इस दोपहरी में अन्तर के, सब स्वर हा—उदभ्रांत हो गए।

स्वपन सजे तत्काल गए झर,
नयनों में आंसू आए भर।
साथी सारे गए रूठते—
ऐसा ज्वर उठा मेरे दर।

आज चेतना डूब चली है, सब को मेरी हंसी खली है,
मेरी इस मन की बगिया में, नवल सुमन सब ध्वान्त हो गए।

एक चाह उठती है बस अब,
आएगी मधु-प्रात भला कब।
चिर प्रतीक्षा है उस क्षण की—
चमक उठे तम व्योम त्याग जब।

बढ़ जाए सब ओर जागरण, मिट जाए हर मन का क्रन्दन,
ऐसी गूंज उठी वीणा की, क्रन्दित स्वर सब शान्त हो गए।

—

महान मन्त्र

⊕ हरिपालसिंह चौहान 'दग्ध'

स्वदेश में विकास-योजना नवीन चल रही।

उठे असंख्य हाथ, पाँव एक साथ उठ गये,
असंख्य फावड़े-कुदाल कोटि-कोटि जुट गये।
फड़क उठे असंख्य उर उफान एक आगया,
नवीन चेतना, नया विहान एक आगया।

प्रकाश को स्वराष्ट्र की वसुन्धरा मचल रही,
स्वदेश में विकास-योजना नवीन चल रही।

सुर-असुर सभी उठे कि एक ही विधान है,
निभाग रत्न-राशि का समान ही समान है।
कुदालि-फावड़े, नवीन शेषनाग-डोर ले,
पहाड़, श्रम-रई, स्वदेश-सिन्धु में झकोर ले।

उतावली खड़ी महान लक्ष्मी उछल रही,
स्वदेश में विकास योजना नवीन चल रही।

उपेन्द्र-नेहरू अनन्त बुद्धि की विभा लिए,
सुराम-राज-योजना, चतुर्मुखी प्रभा लिए।
अपार श्रम स्वहस्त से करो यही महान मन्त्र,
देश स्वावलम्ब से बना रहे सदा स्वतन्त्र।

'दग्ध' कोटि कण्ठ से अखण्ड ध्वनि निकल रही,
स्वदेश में विकास-योजना नवीन चल रही।

—

परिचय है पर....

⊕ हरिमोहन शर्मा

यह किस शशि की परछाईं है।

परिचय है पर आकार नहीं,
प्रतिध्वनि है किन्तु पुकार नहीं।
चपला सी चल देगी पल में,
सम्मुख सकुचाती आयी है।
यह किस शशि की परिछाईं है।

छिपता ही देखा एक हास,
गायक की मिटती हुयी श्वास।
मैं सोच रहा हूँ यह केवल,
लज्जा है या तरुणाई है।
यह किस शशि की परिछाईं है।

फिर भी साधक को मुक्ति मिली,
आराधक को अनुरक्ति—मिली,
यह कैसी मृगतृष्णा जिसमें,
सागर की सी [illegible] है
यह किस शशि की परछाईं है

—

घिर आयी आँखों में

⊕ क्षमा नाथ झा

घिर आयी आंखों में पीर भरी बदली !

कोमल कपोलों के,
महकीले यौवन पर।
रेशम-सी होठों के,
सपनीले कंपन पर।
शनशनी वेला-सी,
छितरायी अंधियारी।
पतझर की छाया,
ज्यों छायी हो उपवन पर।

गंधिल जुन्हायी के,
इतराये आंगन में।
जाने क्यों मावस की डोली है उतरी !
जलती दोहपरी-सी,
लहक उठी काया है।
जीवन की माँगों से,
यौवन घबराया है।

अनबोली बोली पर,
जाने क्या बात हुई।
बेसुध का पहरा भी,
गूंगे बन छाया है।
सूखी-सी धरती में,
भूखे—से अम्बर-में।
गहरी उसांसों की साँसें हैं उखड़ी !

—

हमलावर तुम वापस जाओ

⊕ त्रिवेणी शर्मा 'सुधाकर'

हमलावर तुम वापस जाओ यही हमारा नारा है,
उठो जवानो! आज हिमालय ने हमको ललकारा है।

पंचशील के हत्यारे को,
ठीक राह पर लाना है।
सहस्तित्व के द्रोही को अब,
नया सबक सिखलाना है।

चौवालिस करोड़ भारती मिलकर कदम बढ़ायेंगे,
मातृभूमि के चरणों में प्राणों की बलि चढ़ायेंगे।

इंच-इंच भारत के भू,
पर अपना लहू बहायेंगे।
सर में कफन बांध कर सब,
मिल दुश्मन से टकरायेंगे।

गंगा यमुना का पानी अब खौल-खौल उफनाता,
भारत के हर वीर सिपाही को यह याद दिलाता है।

उठो जवानो, आज हिमालय,
ने हमको ललकारा है।
हमलावर तुम वापस जाओ
यही हमारा नारा है।

—

अन्तर के तार

⊕ त्रिभुवनसिंह चौहान 'प्रेमी'

छेड़ो ना मेरे अन्तर के तार।
विरह-पीड़ित अधर, आकुल-व्याकुल है स्वर, सुप्त-सागर में लाओ न ज्वार।

दुग्ध-अन्तर में उठती पीड़ा।
सूझती है तुम्हें कैसी क्रीड़ा ?
भूल इठलाओ ना, छोड़ क्रीड़ा।
विहग उड़जायेगा, त्याग क्रीड़ा।

चन्चल नयना नवल, झुका मुस्का चपल, करो जागृत ना नूतन-प्यार।

एकाकी जीवन प्रियवर निराला,
शांति, मस्ती ही है मेरी हाला।
मत छलकाओ ये मधुमय प्याला,
शून्य-अन्तर न हो मतवाला।

मधुर-कोमल हृदय-हित बनो न प्रलय, रूठ जाऐगी सुभगे ! बहार।

मग्न दशा पर मुझे छोड़ दो तुम,
अपने पथ पर स्वयं मोड़ दो तुम।
आतुरता ये लगन छोड़ दो तुम,
प्रीत-गागर मधुर फोड़ दो तुम।

शांति कार्य सुघन, कलुष कांपे प्रखर होगा सुन्दर, सरस, संसार।

प्रिय ! छुपालो तुम ये भीगी पलकें,
रोको उलझे ना ये काली अलकें।
प्रीत का कजरा कहीं न छलके,
मधुमय मदभरे ना ये छलकें।
'प्रेमी' प्रेम-पावन, होवेगा मन भवन,
मिलन-विदाई है ये निस्सार। छेड़ो ना मेरे अन्तर के तार।

—

बन्दी आँसू

⊕ ज्ञानेन्द्र पाण्डेय

अधमुंदी नयन-कोरके पास,
बना बन्दी, आँसू चुपचाप ;
मुक्ति के द्वार खड़ा रोता।
धैर्य का हृदय विकल होता।

हाय, अब बहे आँस की पीर !
व्यथा बन जाए सारी नीर।
हृदय कुछ हल्का हो जाए,
याद आँसू में खो जाए।

किन्तु, यह भी होगा अपराध,
सुखद, बीती घड़ियों के साथ।
बहे यदि अश्रु, अधर के पास,
चुंबनों का होगा परिहास।

निराशा में भटकेगी प्रीति,
मीत को भूल जाएँगे तीत।
नयन का काजल छूटेगा,
याद का तारा टूटेगा।

अतः रोको यह नादानी,
छिपालो, आँखों का पानी।
प्रिया का शयन, नयन में है,
वचन का मान, नयन में है।

नयन का प्यार, न बहने दो,
हृदय की व्यथा न कहने दो।
शुष्क आँसू को होने दो,
अकेला दिल को, रोने दो।

—

उभर न आये...

ज्ञानस्वरूप 'कुमुद'

उभर न जाये मन की पीड़ा

पनघट पर जाकर गोरी तुम, अधरों पर मुस्कान न लाना,
वहुत हुए वदनाम यहाँ पर, गीत सुवह औ, शाम न गाना।

हर अधरों पर गूँज रहा है,
गीत तुम्हारा, नाम हमारा।
पुरवाई अपने हाथों से,
उलट न दे घूँघट पट सारा।

मन्थर मन्थर गति से चलकर, कदम कदम पर मत रुक जाना,
वहुत हुए वदनाम यहाँ पर, गीत सुवह औ, शाम न गाना।

छलके ना नयनों की गागर,
उभर न जाये मन की पीड़ा।
पुरवइया से वढ़ कर कह दो
नहीं करे वह तुम से क्रीड़ा।

याद राह में करके मेरी, मत असमंजस में पड़ जाना,
वहुत हुए वदनाम यहां पर, गीत सुवह औ, शाम न गाना।

पनघट के तट भर कर तुम,
घूँघट पर से नहीं निरखना।
मनमोहन का सपना पाकर,
राधा जैसी नहीं थिरकना।

कुमुद वचाकर,चलना आँचल, शूलों से तुम विंध मत जाना,
वहुत हुए वदनाम यहाँ पर, गीत सुवह औ शाम न गाना।

—